NEWS FROM TROLLEYS

BI WEEKLY

ट्रॉली टाइम्स

VOL-1
10
- Edition No -

VOICE OF KISAN PROTEST 2020-21 | TROLLEY TIMES | TUESDAY, FEBRUARY 16TH, 2021

पेशेवर पहचान और मूलभूत मुद्दों की राजनीति

सज्जन कुमार, अनुवादः सुचेतना सिंह

चित्र और प्रतीकवाद किसी भी विमर्श के अभिन्न अंग हैं। वे एक को दूसरे से वरीयता देकर लोकप्रिय धारणा का निर्माण करते हैं। 26 जनवरी को लाल किले की प्राचीर पर निशान साहिब के ध्वजारोहण ने उस नैतिक स्तर को ठेस पहुँचाया, जिसे प्रदर्शनकारी किसानों ने हासिल किया था। उनके कष्टों, बलिदानों, मृत्यु, आत्महत्या और कठिनाइयों के चलते उनकी दृढ़ता ने अपनी प्रमुखता खो दी। आखिरकार, यह सरकार और कॉरपोरेट मीडिया प्रदर्शनकारी किसानों को राष्ट्र-विरोधी के रूप में पेश करने में सफल हुई, वह लेबल जो आज के भारत में बहुतायत में पाया जाता है।

प्रदर्शनकारियों को इस पहुँची ठेस की सफलता से उत्साहित, उत्तर प्रदेश के लोकलुभावन मुख्यमंत्री ने 28 जनवरी मध्यरात्रि के अंधेरे में ग़ाज़ीपुर सीमा पर प्रदर्शन कर रहे किसानों पर अंतिम कार्रवाई करवा दी। राकेश टिकैत के रोते हुए आंसू और घुटी हुई आवाज़ के दृश्य वायरल हो गए। एक व्यक्ति की यह छवि, उसकी उद्विग्नता, लाचारी, पीड़ा और फ़िर भी, दृढ़ संकल्प, तुरंत ही किसानों के सामूहिक गुस्से के रूप में आ गई। सत्ता के अभिमान ने टिकैत द्वारा हस्ताक्षरित अपनी स्वयं की दासता बनाई।

28 जनवरी के बाद से हमने बड़ा बदलाव देखा है। संकीर्ण राजनीति के प्रचलित युग में, सांस्कृतिक मुद्दों ने मूलभूत मुद्दों का स्थान ले लिया था। इसलिए, हर रोज़ के आर्थिक पहलू, चाहे ग्रामीण संकट, कृषि संकट, वेतन की समस्या, नियुक्त करके निकाल देने की नीति, बेरोज़गारी और नौकरी में कटौती, सामूहिक हताशा और उभरता गुस्सा अपनी आवाज़ सुनवाने के लिए एक राजनीतिक मुद्रा कभी प्राप्त नहीं कर सका। क्यों? क्योंकि हमारी भौतिक पीड़ाएँ उस सांस्कृतिक राजनीति के भँवर में डूब गईं, जो हमारी पारलौकिक जाति और सामुदायिक पहचानों को हमेशा विशेषाधिकार देती है। मुझे याद है कि मैंने जनवरी 2017 में, उत्तर प्रदेश भर के किसान उत्तरदाताओं से नोटबंदी पर उनके विचार पूछे। जहाँ सभी ने दुख और नुकसान की कहानी बताई, वहीं उनका भाजपा का समर्थन या विरोध करना उनकी पहचान से संबंधित था। गोंडा में एक मध्यम आयु वर्ग के शिक्षक सह किसान ने बोला कि एक किसान के रूप में मैं बीजेपी का विरोध करता हूँ, एक ब्राह्मण के रूप में मैं इसका समर्थन करता हूँ।

हम सभी में हमारी जाति, गोत्र, धर्म, क्षेत्र की मिली जुली पहचान है और फ़िर हमारी एक पेशेवर पहचान है। सत्ता के राजनीतिक खेल में, जुटान जाति अथवा सामुदायिक तरीक़े में हो सकता है या व्यवसायिक तरीक़े से या दोनों को एक साथ लाकर हो सकता है। इस पृष्ठभूमि में, 28 जनवरी न केवल किसानों के प्रदर्शन के इतिहास में, बल्कि सामाजिक आंदोलनों के क्षेत्र के लिए भी एक आमूलचूल परिवर्तन होता है, जो जाति और सामुदायिक पहचान के ऊपर पेशेवर पहचान के मुखर होने का है।यदि हम हाल के दिनों में हुए प्रदर्शन और आंदोलन का प्रतिरूप देखें, तो जब भी सामूहिक क्रोध को जाति और समुदाय की रेखाओं पर व्यक्त किया गया, या तो भाजपा को इसका फ़ायदा हुआ है या पहले उन्हें गिराने और फ़िर उन्हें दबाने में सफ़ल रही है। किंतु जब भी, क्रोध और विरोध व्यावसायिक रेखाओं और मूलभूत मुद्दों पर आधारित रहा, भाजपा को एक झटका लगा है। उदाहरण के लिए, 2018 में, और अपेक्षाकृत लोकप्रिय मुख्यमंत्री होने के बावजूद, ग्रामीण संकट और कृषि संकट के कारण भाजपा पार्टी को संगठनात्मक रूप से कमजोर जीर्ण-शीर्ण कांग्रेस से छत्तीसगढ़ चुनाव हारना पड़ा। भाजपा ने पहचान के आधार पर जुटान का प्रयोग कर, विशेष रूप से ओबीसी का, विभिन्न क्षेत्रों और जातियों के लोगों के इस व्यावसायिक समन्वय को काउंटर करने की पूरी कोशिश की है। लेकिन भौतिक राजनीति और पेशेवर पहचान प्रबल रही और पार्टी हार गई। यह एक अप्रत्याशित, ज़रूरी लेकिन अल्पकालिक महत्वपूर्ण बदलाव को दर्शाता है।

आज, किसानों के प्रदर्शन के चलते, छवि उलटने की एक प्रक्रिया हो रही है। वही किसान समुदाय, जिन जाटों ने सितंबर 2013 में कुख्यात महापंचायत को सांप्रदायिक बदलाव के रूप में चिह्नित किया था और मुसलमानों के साथ निर्णायक रूप से टूट रहे थे, वही अब किसानी पहचान को गले लगा रहे हैं। यह सच है कि महापंचायत में आज जाट समुदाय की भारी उपस्थिति है, लेकिन वे हिंदुत्व के आक्रामक समर्थन आधार होने के बजाय मुख्य रूप से किसान के रूप में अपनी पहचान को फ़िर से स्थापित कर रहे हैं। यह सहजीवी तरीक़े में अंतर-समुदाय संबंधों के मेलजोल के लिए ज़रूरी है। मेवात क्षेत्र मुसलमान भी किसान बिरादरी का हिस्सा है। पेशेवर पहचान की यह प्रधानता हमारे रोज़मर्रा के जीवन के सांप्रदायिकरण की प्रक्रिया को तोड़ती है।

सत्ता में बैठे लोग अपनी सभी चालें चलने की पूरी कोशिश कर रहे हैं और इसे ग़लत नाम देकर प्रदर्शन को बदनाम कर रहे हैं। पहले इस प्रदर्शन को सिर्फ़ पंजाब तक सीमित किया गया, फ़िर ख़ालिस्तानी समर्थित आंदोलन के रूप में बताया गया, फ़िर विपक्षी दलों और राष्ट्र विरोधी ताकतों के रूप में गुमराह करने वाली संस्थाएँ बताया गया जो एक वैश्विक साज़िश का हिस्सा हैं। अब, प्रधान मंत्री मोदी ने अमीर किसान बनाम गरीब किसान के वर्ग के सीमांकन का भी आह्वान कर दिया है, जो वे कभी कॉर्पोरेट्स के क्षेत्र में नहीं करते। यह याद रखना अच्छा होगा कि जब नोटबंदी और जीएसटी की नीतियों ने कई छोटे उद्यमियों को बेहद मुश्किलों में डाल दिया था, विशेषकर अनौपचारिक क्षेत्र में, बड़े कॉरपोरेट्स ने बहुत आसानी से इसे पार कर लिया था।

शक्ति और विरोध के इस विषैले अन्तराल में, हम धारणा और प्रति-धारणा बनाने के खेल में हैं। अंतिम परिणाम के बावजूद, किसान पहले से ही इस तथ्य से धारणा का युद्ध जीत चुके हैं, कि प्रभावित किसान अपनी कृषि पहचान का विशेषाधिकार कर रहे हैं और व्यावसायिक मुद्दों के साथ साथ मूलभूत मुद्दों पर एक व्यापक सामाजिक गठबंधन के लिए तैयार हैं। यह प्रक्रिया राजनीतिक क्षेत्र में कितनी दूर तक जाएगी, यह चिंतन का विषय हो सकता है, लेकिन इससे निश्चित रूप से संकीर्ण जातिवादी और धार्मिक पहचान पर आधारित सांस्कृतिक राजनीति में दरार पड़ गई है। इस लोकप्रिय धारणा में, भाजपा अब किसान हितैषी पार्टी नहीं रही और वह किसानों से अलग और शत्रुतापूर्ण होने की अपनी पुरानी छवि पर चली गई है।

ILLUSTRATION BY:
PARMITA MUKHERJEE

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ़ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूँ - 'यह तीसरा आदमी कौन है ?'
मेरे देश की संसद मौन है।

धूमिल

लोकतंत्र अब जनता की ज़िम्मेदारी है!

रविंद्र "रवि"

वैसे भी हम लोकतंत्र दिवस, अंतराष्ट्रीय स्तर पर ही तो मनाते आये है, खैर,, राष्ट्रीय लोकतंत्र तो वैसे खतरे के निशान से ऊपर बह रहा है। अब हमारे पास आखिर उत्सवधर्मीता से मनाने लायक लोकतंत्र रहा ही कहाँ है?

साथियों।, 1952 के आम चुनाव के बाद क्रमशः मंद गति से और 21वीं सदी के बीसवें दशक में अत्यंत तीव्रगति से और धारदार तरीके से लोकतंत्र का कत्ल हुआ है । और इस लोकतंत्र की हत्या में हथियार बनाए गए हैं कॉरपोरेट घरानों की मुनाफाखोरी, और अधिकतर सूचना तंत्र को, मीडिया को, भले वह प्रिंट मीडिया हो, टीवी पत्रकारिता या सोशल मीडिया। चाटुकारिता तो जैसे हिंदुस्तानी मीडिया की पहचान सी हो गयी है। भारतीय लोकतंत्र पर से उठते विश्वास को कुछ ऐसे समझे, एक दौर था जब कपड़े हाथ से बना कर सील कर पहने जाते थे । जिसे मेहनत बहुत लगती थी और परिणाम आकर्षक थे। आहिस्ता आहिस्ता खादी के कपड़ों की जगह मशीनों से बुने हुए कपड़ों ने ले लिया और आखिरकार तो पूरा सूट ही रेडीमेड आने लगा, जिसमे न कपड़े बुनने की मेहनत, न सिलने का श्रम । बस आपकी जेब का भार ठीक ठाक हो तो अपने माफिक सूट को अर्जित करना बहुत आसान। ठीक उसी प्रकार आज के इस लोकतंत्र को रेडीमेड लोकतंत्र का नाम देना अतिशयोक्ति न होगी । स्वाधीन भारत में वैधानिक लोकतंत्र के वोट से उनके ए क मायने यह थे, जिसमे जनता के एक एक विश्वास के अनुरूप लाखों आशाएं लिए चेहरे का जनप्रतिनिधि के रूप में सामने आना। जिनको यहां की जनता के विश्वास और जनमत को हासिल करने लिए धरातल पर न जाने क्या क्या काम करने पड़ते थे , विकास का नारा ही नहीं सहारा भी लेना पड़ता था । तब कहीं जाकर पारदर्शी जननायक ओर आशानुकूल प्रतिनिधि संसद की शान बन पाता था।

यह तथाकथित मायाजाल जब तक जनता के सामने नँगा होता इससे पहले आज का रेडीमेड दौर शुरू हो चुका है इन सालों में हमने लोकतंत्र का सबसे वीभत्स रूप देखा है रेडीमेड लोकतंत्र का दौर। जो कि बेहद चिंताजनक है जिसकी बुनियाद मृतप्राय लोकतंत्र की लाश पर टिकी है। जहां न तो विकास करने की जरूरत है न किसी दूसरे को नीचा दिखाने की दरकार है। बस कॉरपोरेट घरानों के समर्थन और मीडिया के एक बड़े भाग को नियंत्रित करके, चंद करोड़ों में आपको आजकल रेडीमेड जनप्रतिनिधि मिल जाएंगे। जिनका एक रूप हम मध्यप्रदेश में देख चुके है। लोकतंत्र पर जानलेवा प्रहार था। आम नागरिक के विरोध करने के सवैंधानिक अधिकार को हर सम्भव दबाया जाने लगा, उसे देश द्रोह, अरबन नक्सल, आंतकवाद ओर खालिस्तानी कहकर, कुचलने के प्रयास, ऐसी ऐसी उपाधियों से नवाजा गया, जिनकी स्वतंत्र भारत मे धरना प्रदर्शन और आंदोलन के लिए कल्पना भी नहीं कि जा सकती । जिसके लिए ईडी और सीबीआई तक कि सरकारी तंत्र का भी दुरुपयोग किये जाने से कोई संकोच नही था। हालांकि राजस्थान में लोकतंत्र विरोधी ताकतों की हार अवश्य हुई है।

मूल मुद्दों से आवाम का ध्यान भटकाकर समय समय पर नए नए छलावे रचे गए, कभी फ़िल्म इंडस्ट्री कभी पाकिस्तान, कभी हिन्दू राष्ट्रवाद, कभी पत्रकारिता में बोलने की आजादी पर प्रहार। मगर पर इस बीच एक चीज खो सी गई है और वह है वोट की कीमत जो की आज शून्य हो चुकी है अब तो वोट देना एक सेल्फी इवेंट मात्र बनकर रह गया है। क्योंकि अब आपका वोट यह तो तय कर सकता है कि हमारी इच्छाओं से हम अपना प्रतिनिधि चुन रहे है। लेकिन इस बात के लिए आश्वश्त नहीं कर सकता कि उस प्रतिनिधि की इस दल में मियाद कब तक है। इधर सविंधान के धर्मनिरपेक्ष राज्य की कमर टूटती नजर आ रही है। पुर्ण हिन्दू राष्ट्र की अवधारणा, सुसंगठित समाज मे परस्पर फूट का काम कर रही है। साथ ही, मानवता पर जिजीविषा के संकट तक गहराने लगते है।

ऐसे समय मे मात्र जनता ही वह माध्यम है जो ध्रुवीकरण की और अग्रसर भारतीय लोकतंत्र को उत्तम स्वास्थ्य दे सकती है। आवाज बुलंद करें। जहां अन्याय झलके उसका खुलकर अहिंसक विरोध करें। जनता की आवाज कुछ समय के लिए दबाई जा सकती है मगर विचारों के सैलाब को दबाना नामुमकिन है। बिना जनाधार के आंदोलन खड़े नहीं हुआ करते।

जय हिंद!

WWW.TROLLEYTIMES.ONLINE
TWITTER@ TIMESTROLLEY
FACEBOOK@ TROLLEYTIMES
TIMESTROLLEY@GMAIL.COM
INSTAGRAM@ TROLLEY_TIMES_OFFICIAL

EVERYONE IS FREE TO PRINT THIS PDF WITHOUT MAKING ANY CHANGES.

दो कृषि-आंदोलनों की एक दास्तान

1907 में पगड़ी संभाल जट्टा आंदोलन और 2020 से जारी किसानों के विरोध प्रदर्शनों के बीच समानताएँ

लेखक: डॉ. नादिया सिंह
अनुवाद: सुचेतना सिंह

इतिहास कई अर्थों में ख़ुद को दोहराता है। बहुत बार अतीत में हुई घटनाओं के आईने में हमें वर्तमान दिखाई देता है। शायद इसी लिए, स्वतंत्रता-पूर्व पंजाब में ब्रिटिश शासकों द्वारा भूमि के उपनिवेशिकरण के विरुद्ध चले 'पगड़ी सम्भाल जट्टा' आंदोलन और भारत की राजधानी नई दिल्ली की सीमाओं पर वर्तमान में चल रहे किसानों के आंदोलन में हमें समानताएँ दिखाई देती हैं। इन दोनों आंदोलनों का जन्म मिलते-जुलते कारणों से हुआ। दोनों की उत्पत्ति के मूल में वे अंतर्विरोध हैं जो बाज़ार की ओर झुकाव वाले कृषि-विकास के मुद्रीकृत पैटर्न से पैदा हुए। इस स्थिति में जहाँ एक ओर खेती से जुड़े चंद सरमाएदारों को तो बहुत भारी आर्थिक लाभ मिलता है वहीं गाँवों के एक बड़े वर्ग को बढ़ते संकट, बहुत ही निम्न स्तर के विकास और क़र्ज़दारी के साथ रहना पड़ता है।

'पगड़ी संभाल जट्टा' आंदोलन पंजाब में अंग्रेज़ी शासन के ख़िलाफ़ पहला बड़ा आंदोलन था। अंग्रेज़ों ने 1849 में पंजाब पर क़ब्जा किया था और 1907 में उन्होंने पंजाब भूमि उपनिवेशण अधिनियम (पंजाब लैण्ड कॉलोनाइज़ेशन एक्ट) पारित किया था। इस पूरे दौर में पंजाब राजनैतिक रूप से एक निष्क्रिय क्षेत्र बना रहा था और अंग्रेज़ों ने सचेत रूप से यहाँ के किसानों को ख़ुश रखने की नीति अपनाई थी। इस के पीछे मंशा यह थी कि राजनैतिक तौर पर एक वफ़ादार, विश्वासपात्र सहारे की बुनियाद डाली जाए, भूमि से होने वाली आय को अधिकतम किया जा सके और सैन्य भर्ती के लिए मदद मिल सके। 1887 में नहर-कालोनियों के निर्माण के बाद, बड़ी संख्या में किसानों और सेवानिवृत्त सैनिकों को "किसान अनुदान" दिए गए। उन्हें अमृतसर, गुरदासपुर, सियालकोट तथा हशियारपुर जैसे ज़िलों से लायलपुर में नए सिरे से आबाद होने के लिए प्रोत्साहित किया गया। वादा किया गया कि उन्हें नई सिंचाई सुविधाओं और आधुनिक उपकरणों से लैस उपजाऊ ज़मीन दी जाएगी। इस घटनाक्रम का स्वागत पंजाब की पहली "हरित क्रांति" की शुरुआत के रूप में हुआ।

लेकिन फिर 1907 में ब्रिटिश सरकार जल्दबाज़ी में कृषि क़ानूनों की एक लड़ी ले कर आई। क़ानून बनाने के सिलसिले में आम तौर पर जिन प्रक्रियाओं का पालन किया जाता है, उन्हें दरकिनार किया गया – ये क़ानून ज़िला अधिकारियों और राजस्व विशेषज्ञों से उचित परामर्श किए बिना ही पारित कर दिए गए थे। बहुत ही बुनियादी किस्म के बदलाव लाने वाले इन क़ानूनों ने नहर-कालोनियों में बसे किसानों के मालिकाना अधिकारों को ख़तरे में डाल दिया - उन के इन अधिकारों को पूर्व प्रभाव से (यानी पिछले समय से) लागू होने वाली कुछ शर्तों के साथ जोड़ दिया गया था। उदाहरण के लिए, यह शर्त लगा दी गई कि अगर एक ज़मींदार की मौत हो जाती है, और उस का कोई पुत्र नहीं है, तो उस की ज़मीन का मालिकाना ज़िला अधिकारियों के पास आ जाएगा। पानी के दाम भी बहुत बढ़ा दिए गए थे और विवादों के निपटारे का एकमात्र अधिकार ज़िला अधिकारियों को दे दिया गया था। यह भी मान लिया गया था कि ये मामले सिविल अदालतों के अधिकार-क्षेत्र में नहीं आएँगे। इन क़ानूनों से किसानों का एक बड़ा हिस्सा पीड़ित हुआ। ये किसान बहुत ज़्यादा कर्ज़दारी और थमे हुए आर्थिक विकास की वजह से काफ़ी हद तक आर्थिक संकट का सामना कर रहे थे। बार ज़मींदार एसोसिएशन, अंजुमन-ए-मुहब्बीन-वतन और सिंह सभा जैसे अलग-अलग संगठनों के एक समूह ने इन कृषि-बिलों का व्यवस्थित विरोध शुरू कर दिया। यह आंदोलन सच में ग़ैर-साम्प्रदायिक प्रकृति का था। अंग्रेजों की इन नीतियों के विरुद्ध लड़ने के लिए हिंदू, मुस्लिम और सिख किसान एकजुट हो गए थे। पंजाबी समाज के अन्य वर्ग, जैसे कि छोटे ज़मींदार, पूर्व-सरकारी अधिकारी और बुद्धिजीवी भी इस संघर्ष में शमिल हो गए। बड़े पैमाने पर लोगों को शामिल करते हुए सभाओं का आयोजन किया गया और क़ानूनों के ख़िलाफ़ प्रस्ताव पारित किए गए। एक प्रमुख ज़मींदार सिराज-उद-दीन अहमद ने लोगों को इन के बारे में जागरूक करने के मक़सद से "ज़मींदार" अख़बार निकालना शुरू किया। 22 मार्च 1907 को 9000 से भी ज़्यादा किसान विरोध में लायलपुर में एकजुट हुए। यहाँ अजीत सिंह (भगत सिंह के चाचा) और लाला लाजपत राय ने उत्साहपूर्ण भाषण दिए। बांके दयाल ने 'पगड़ी सम्भाल जट्टा' कविता पढ़ी और किसानों के लिए स्वाभिमान के प्रतीक पगड़ी के हवाले से आह्वान करते हुए, किसानों को उन के अधिकारों के लिए खड़े होने का सीधा-स्पष्ट सन्देश दिया। समय के साथ यह कविता आंदोलन का पर्याय बन गई।

इस के बावजूद, पंजाब में सरकार ने इन प्रदर्शनों को गम्भीरता से नहीं लिया और ग़लती से यह मान लिया कि इन में शहरी राजनेताओं के एक छोटे से वर्ग द्वारा "बिल को ग़लत तरीके से पेश करने" से ज़्यादा कुछ नहीं है। उपनिवेशीय सरकार को पक्का विश्वास था कि पंजाबी किसानों पर उन का ज़बरदस्त दबदबा और प्रभाव है – ऐसा, कि जिसे हिलाया नहीं जा सकता। लेकिन यह आंदोलन फैलता चला गया और लगातार मज़बूत होता गया। पूरे पंजाब में नए सिरे से प्रदर्शन होने लगे। अजीत सिंह और लाला लाजपत राय ने संयुक्त प्रांतों में यात्राएँ आयोजित कीं और पूरे ज़ोर-शोर से ब्रिटिश माल के बहिष्कार और नए जल-शुल्कों का अनुपालन न करने का अभियान शुरू कर दिया। तब पंजाब के लेफ़्टिनेंट-गवर्नर डेन्ज़िल इब्बट्सन ने कुछ संशोधन प्रस्तावित किए और नए जल-शुल्क को एक साल तक स्थगित करने का प्रस्ताव भी रखा। लेकिन विरोध प्रदर्शनों की गति फिर भी धीमी नहीं हुई। बल्कि लाहौर, अमृतसर और रावलपिंडी जैसे कई शहरों में उपद्रव हुए।

ब्रिटिश प्रशासन ने अब इस आंदोलन को ख़त्म करने का फ़ैसला लिया और अजीत सिंह तथा लाला लाजपत राय को बर्मा में मांडले जेल में निर्वासित कर दिया। सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिबंध लगाने के साथ-साथ प्रिंटिंग प्रेस पर भी सख़्त नियम लागू कर दिए गए। इस के बावजूद, विरोध-प्रतिरोध ज़ारी रहा और समाज के अन्य वर्गों में भी फैलने लगा। रेलवे कर्मचारियों के बीच हड़ताल हुई और भारतीय सेना में असंतोष फैल गया। सिख सैनिक कुल ब्रिटिश सेना का एक-तिहाई थे और डर था कि सेना में विद्रोह हो सकता है। नतीजतन, भारत के वायसराय लॉर्ड ग्रेगरी मिंटो को यह मानने के लिए मजबूर होना पड़ा कि भूमि उपनिवेशण विधेयक "एक ख़राब क़ानून" था। इन कृषि-कानूनों को ख़ारिज कर दिया गया और कृषि सुधारों पर एक नई समिति गठित की गई। यह बिल-विरोधी आंदोलन पंजाब के लिए ऐतिहासिक साबित हुआ और इस के बाद के सालों में पंजाब भारत के स्वतंत्रता संग्राम में आगे-आगे रहा : ग़दर आंदोलन, बब्बर अकाली आंदोलन और भगत सिंह के क्रांतिकारी साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष जैसे क्रांतिकारी आंदोलन इस बात की गवाही देते हैं।

आज एक सदी बाद, पगड़ी संभाल जट्टा आंदोलन के सरोकारों की गूँज फिर से सुनाई दे रही है और हज़ारों किसान सरकार द्वारा लागू किए गए तीन नए कृषि क़ानूनों का विरोध कर रहे हैं। सत्तर दिनों से भी ज़्यादा हो गए, प्रदर्शनकारियों का मोर्चा कड़ाके की सर्दी में अब भी दिल्ली की सीमाओं पर लगा हुआ है। पहले की औपनिवेशिक सरकार की ही तरह, वर्तमान में भी इन क़ानूनों को संसदीय परामर्श और विचार-विमर्श की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अध्यादेश के माध्यम से पारित किया गया है। किसानों को डर है कि खेती का बेलगाम कम्पनीकरण करने वाले ये नए कृषि क़ानून उन्हें बाज़ार की ताक़तों की सनक के हवाले कर देंगे जब कि फ़सलों के पक्के दाम सुनिश्चित करने के लिए उन्हें कोई भी क़ानूनी संरक्षण नहीं मिलेगा। इन क़ानूनों का विरोध करने वाले ये बहादुर-दिल प्रदर्शनकारी बरसों की आर्थिक हताशा और अपमान अपने साथ ले कर आए हैं। भारत की 19% से अधिक राष्ट्रीय आय कृषि से होती है और देश की श्रम-शक्ति का 50% से भी ज़्यादा रोज़गार कृषि-क्षेत्र में है। इस के बावजूद हर गुज़रते साल के साथ आजीविका के साधन के रूप में खेती कम कारगर होती चली गई है। किसानों को डर है कि प्राइवेट मण्डियों के आने से उन की पहले से ही कम आय पर और अधिक आँच आएगी। कई किसान इन क़ानूनों को खेती-किसानी के लिए "मौत का वारंट" मानते हैं। प्रदर्शनकारियों के साथ वर्तमान भारत सरकार का व्यवहार भी हमारे पूर्व औपनिवेशिक शासकों वाले नज़रिए को ही दर्शाता करता है। सरकार ने भारतीय जनता के एक बड़े हिस्से की आजीविका सम्बन्धी इन गम्भीर चिंताओं को दूर करने की ईमानदार कोशिश नहीं की है। इस के बजाय, पहले तो सरकार ने इन विरोध-प्रदर्शनों को विपक्षी दलों का काम बताते हुए ख़ारिज कर दिया, और कहा गया कि वे कृषि क़ानूनों के बारे में ग़लत जानकारी फैलाने की कोशिश कर रहे हैं। बाद के दिनों में प्रदर्शनकारी किसानों को बदनाम करने के लिए बड़े पैमाने पर अभियान चलाते हुए उन्हें राष्ट्र-विरोधी करार दिया गया। फिर भी, इन विरोध-प्रदर्शनों ने और भी ज़्यादा ज़ोर पकड़ा है और भारत के अलग-अलग हिस्सों में फैल गए हैं। अब इन प्रदर्शनकारी किसानों पर अंकुश लगाने के क्रूर प्रयास किए जा रहे हैं। भारी बैरिकेडिंग कर के, कंटीली तारें लगा कर और ज़मीन में गाड़े गए कीलों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर पुलिस तैनात करते हुए प्रदर्शन-स्थलों को मानो जेल में तबदील कर दिया गया है। प्रदर्शनकारियों की इंटरनेट सेवाएँ, बिजली और पानी की सुविधाएँ भी काट दी गई हैं।

इतिहास गवाह है कि लोकतांत्रिक आंदोलन पर डरा-धमका कर अंकुश नहीं लगाया जा सकता। यह आंदोलन लम्बे समय तक चलने वाला है।

मोर्चे पर पत्रकार

शिवांगी सक्सेना

"हम चुनौतियों से लड़ने के तरीके खोज निकालेंगे लेकिन किसी से डरकर रिपोर्टिंग करना नहीं छोड़ेंगे।" ये कहना है स्वतंत्र पत्रकार मनदीप पुनिया का जिन्हे कुछ दिन पहले पुलिस ने सिंघु बॉर्डर से उठाकर जेल मे बंद कर दिया। मनदीप पुनिया शुरुआत से दिल्ली की सीमाओं पर चल रहे किसान आंदोलन को कवर कर रहे हैं। मनदीप ने फेसबुक पर एक वीडियो पोस्ट किया था जिसमे उन्होंने 29 जनवरी को एक समूह द्वारा सिंघु बॉर्डर पर हमले की आंखोंदेखी बताई। उन्होंने बताया था कि कैसे प्रदर्शन स्थल के पास पचास-साठ लोग आए और उधम मचाने लगते हैं। इस वीडियो में मनदीप ने बताया कि समूह ने प्रदर्शनकारियों पर पथराव किया, पेट्रोल बम फेंके और हजारों पुलिसकर्मियों के सामने किसानों के सामान में आग लगाने की कोशिश की। साथ ही उन्होंने वीडियो में बताया था कि हमलावरों में से दो भाजपा से जुड़े थे। इस वीडियो के वायरल होते ही शाम को पुलिस मनदीप को घसीटते हुए थाने ले गई।

किसान आंदोलन के दौरान पुलिस द्वारा रिपोर्टरों के साथ हो रहा शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न अब सामने से देखा जा सकता है। किसान आंदोलन को कवर करने वाले स्वतंत्र और ऑनलाइन पत्रकारों के खिलाफ पुलिस की आक्रामकता बढ़ती जा रही है। बॉर्डर पर पत्रकारों का आईडी अब इसलिए नहीं माँगा जा रहा कि उनके मीडिया से होने का प्रमाण मिल सके बल्कि पुलिस आईडी देखकर उनसे मुख्यधारा और ऑनलाइन के अनुसार व्यवहार कर रही है। स्वतंत्र पत्रकार विश्वजीत सिंह लगातार शाहजहाँपुर और ग़ाज़ीपुर बॉर्डर से रिपोर्टिंग कर रहे हैं। 29 जनवरी को वो ग़ाज़ीपुर बॉर्डर से रिपोर्टिंग कर रहे थे। ये वहीँ समय है जब पुलिस ने भारी बैरिकेड लगाने शुरू कर दिए थे। विश्वजीत बताते हैं कि उस दिन उन्होंने पुलिस का सबसे क्रूर रवैया देखा। वो कहते हैं, "मै जब रिपोर्टिंग करने ग़ाज़ीपुर बॉर्डर पहुँचा तभी मुझे वहाँ पुलिस ने आगे जाने से रोक दिया। एक वरिष्ठ IPS अफसर कह रहे थे केवल मुख्यधारा यानी मैनस्ट्रीम मीडिया को ही आगे जाने की इजाज़त है।" विश्वजीत का कहना है कि ये वहीँ लोग होते हैं जो नैतिकता और अखंडता पर प्रश्न पत्र लिखते हैं, ताकि उस जगह पहुँच सकें जहाँ पर बैठकर वो संविधान का उल्लंघन कर सकते हैं।

26 जनवरी के बाद सिंघु, टिकरी और ग़ाज़ीपुर बॉर्डर पर पुलिस की तैनाती बढ़ा दी गई है। अब यहां सात लेयर की बैरिकेडिंग की गई है। सड़कें खोदकर उसमें लंबी-लंबी कीलें व नुकीले सरिये भी लगा दिए गए हैं। पुलिस की तरफ रोड रोलर, जेसीबी और क्रेन खड़ी हैं जिसके ज़रिए लगातार बैरिकेडिंग का विस्तार किया जा रहा है। पहले बैरिकेडिंग किसानों के मेन स्टेज से टिकरी बॉर्डर मेट्रो स्टेशन तक ही की गई थी जिसे अब बढ़ा दिया गया है। पुलिस ने बॉर्डर पर ही सड़क खोदकर उस पर सीमेंट की लेयर लगाई है और नुकीली कीलें लगवा दी हैं ताकि ट्रैक्टर दिल्ली की तरफ न आ पाएं। टिकरी बॉर्डर इस समय किसी जंग के मैदान से कम नहीं लग रहा। स्थिति आर या पार की लग रही है। यहीं नहीं सिंघु बॉर्डर और ग़ाज़ीपुर बॉर्डर पर भी बैरिकेड के कारण रिपोर्टरों को काफी घूमकर एक किलोमीटर चलना पड़ता है। रविंदर MN TV नाम से ऑनलाइन मीडिया पोर्टल मे बतौर पत्रकार काम कर रहे हैं और पिछले तीन महीने से किसानों के बीच रहकर अलग-अलग बॉर्डर से निरंतर रिपोर्टिंग कर रहे हैं। उनका मानना है कि वो 26 जनवरी के बाद कई बदलाव देख रहे हैं। पुलिस बैरिकेडिंग के ज़रिए डर का वातावरण बनाने की कोशिश कर रही है। रविंदर कहते हैं,"पुलिस हर किसीकी चेकिंग कर रही है लेकिन मेनस्ट्रीम चैनलों जैसे रिपब्लिक, ज़ी, इंडिया टीवी इनकी कोई चेकिंग नहीं की जाती और सीधा बैरिकेड के आगे जाकर रिपोर्टिंग करने दी जाती है। पुलिस ऑनलाइन चैनलों के पत्रकारों को आगे तो छोडो, बैरिकेड के आसपास भी रिपोर्टिंग नहीं करने देती। यूट्यूब चैनलों ने इस आंदोलन का सच दिखाने की हिम्मत की है और इसलिए उनके साथ ऐसा व्यवहार किया जा रहा है।"

स्वतंत्र और ऑनलाइन पत्रकारों के साथ पुलिस तानाशाही रवैया अपना रही है। सिंघु बॉर्डर पर रिपोर्टिंग करने के दौरान रविंदर को पुलिस द्वारा बदसलूकी का सामना करना पड़ा। यहां तक कि उन्हें पुलिस द्वारा देशद्रोही करार कर दिया गया। रविंदर ने बताया कि बैरिकेड के पास मेनस्ट्रीम मीडिया के पत्रकार रिपोर्टिंग कर रहे थे। फिर भी रविंदर को पुलिस ने आगे जाने से रोका। अनुरोध करने पर पुलिस ने रविंदर को धमकाया कि वो रिपोर्टिंग नहीं कर रहे बल्कि देश को भड़का रहे हैं। इतना ही नहीं पुलिस ने उनका कैमरा तक तोड़ने की धमकी भी दी। स्वतंत्र पत्रकार आकाश पांडेय का 26 जनवरी के दिन भड़की हिंसा के बीच मोबाइल चोरी हो गया। आकाश बताते हैं कि 26 को ट्रेक्टर परेड़ के दौरान वो नांगलोई चौक के पास ही थे जब हिंसा भड़की। वो अपने मोबाइल से वीडियो बना रहे थे। अचानक 15 -20 नकाबपोश उपद्रवियों ने उन्हें घेर लिया और मारने-पीटने लगे। वो उनका मोबाइल छीनकर भाग गए। आकाश कहते हैं कि पुलिस वहीं थी और सामने खड़ी थी लेकिन बजाए उपद्रवियों को पकड़ने के पुलिस मूकदर्शक बनकर चुपचाप सब कुछ देखती रही। वहाँ दिल्ली पुलिस की गुंडागर्दी नहीं चली। जबकि वो पत्रकार जो सच दिखा रहे हैं और शालीनतापूर्वक अपना काम कर रहे हैं उन्हें घसीटते हुए जेल में बंद कर देती है।

वन्दे मातरम्

अष्टभुजा शुक्ल

गेहूँ की कुशाग्र मूँछों पर गिरी वृष्टि की गाज
काली-काली भुङ्ली वाली बाली हुई अ-नाज़
हुए अन्नदाता ही दाने-दाने को मोहताज
भिड़े कुकुरझौंझौं में राजन महा ग़रीबनवाज़

पँगु पाँव, गूँगी जबान, लकवा से लूले हर कर
आँख-आँख मोतियाबिन्द सूझे परिवार न घर वर
चौपट हुई रबी ऐसे कि प्राण-पखेरू तड़पें
बादल बरसे नहीं गगन से एसिड मूते छर-छर

रबी गई सो गई खरीफ़ गई सूखे से
मुँह सूखे सूखे से पेट युगों भूखे से
गश खा-खा गिर गए खेत में ग्राम देवता
हरे भरे से रुख़ खड़े रूखे-रूखे से

धान हुए कुश धरती में दरार की अनगिन रेखा
मुँह में जूठ नहीं लगने के आगम घर-घर देखा
आँख, आँख की ओर ताक, मुँह लेती फेर, सिसककर
कागज-पत्तर में सूखा-सैलाब का लेखा-जोखा

आसमान का दिल पत्थर हो गया ऐन बसकाल
चमके गरजे तड़के भड़के फिर भी पड़ा अकाल
काँख-काँख रह गए न झलकीं जल की बून्दें
पकड़ा करक जलधरों को बेआब हुए तत्काल

बना भव्य कॉम्प्लेक्स काँच का नामक भूल भुलइया
बिक्री हुई अपार लक्ष्य के पार बाप रे दइया
बड़के कोविद बिके यसों दस बीस डिजिट डालर में
हुआ चित्रपट फिल्मी-इल्मी सबसे बड़ा रूपइया

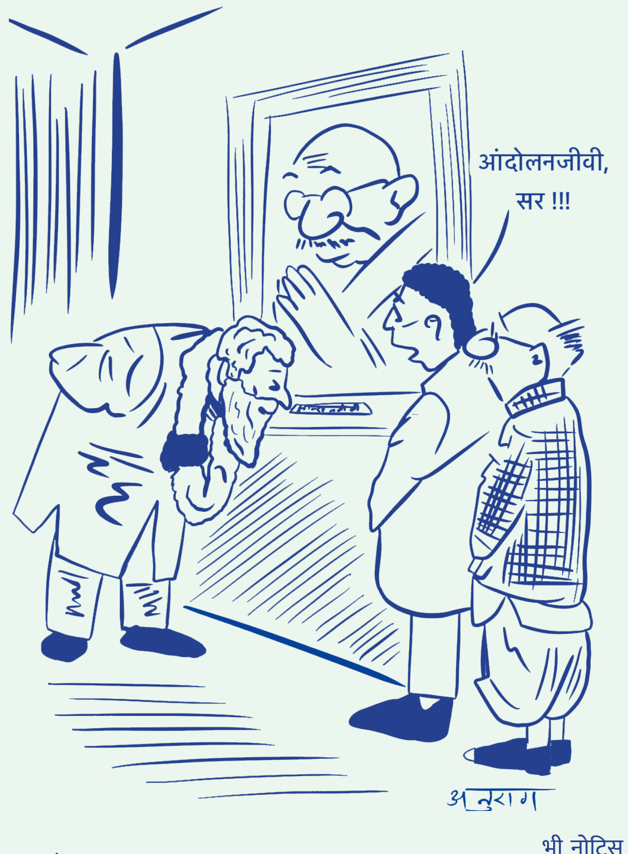

सूचकाँक मत देखो टोपी नीचे गिरी दरोगा
मूत में रोहू खोज रहे पोंगा के पोंगा
अबकी ऐसी क़िस्मत — लेखक आए हैं कि
राष्ट्र कनक भूधराकार मिण्टों में होगा

सुजला रोज़ निर्जला होती वन्दे मातरम्
विफला बनकर सुफला रोती वन्दे मातरम्
धुधुआकर जल रही चतुर्दिक् शस्य-श्यामला भूमि
जाति-धर्म की होती खेती वन्दे मातरम्

संयुक्त किसान मोर्चे की तरफ़ से कानूनी सहायता

मोर्चे की कानूनी टीम

मोर्चे की कानूनी टीम गिरफ़्तार हुए किसानों से मिली, सभी चड़दी कला में हैं। 10 लोगों को ज़मानत मिल चुकी है। बाक़ी के 112 किसान अलग-अलग जेलों में बंद हैं। उनकी आर्थिक मदद जेल में जमा कर दी गई है। सभी की धाराओं के अनुसार ज़मानत अर्ज़ी दी जाएगी। 16 किसान अभी भी लापता हैं और उनकी खोज जारी है। लगभग 150 वकील अलग अलग मुक़द्दमों में फँसे किसानों की वकालत करेंगे। दिल्ली गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी के 4 वक़ील मोर्चे की कानूनी टीम का हिस्सा है।

पुलिस द्वारा कई किसानों को नोटिस जारी किए गए हैं। जो लोग सीधे पुलिस के पास गए, उन्हें भी जेल में डाल दिया गया। यह केवल किसानों को डराने की चाल है। मोर्चे की तरफ़ से अपील है कि ऐसे किसी भी नोटिस के संबंध में अपने संगठनों या सीधा संयुक्त किसान मोर्चा की कानूनी टीम से संपर्क किया जाए और वक़ील की सलाह के बिना कोई भी कदम ना लिया जाए।

कानूनी सहायता टीम के नम्बर नीचे दिए गए हैं:

वीर सिंह - 8447466012
जसदीप सिंह - 9910499840
कपिल मादान - 9971305252

सांस्कृतिक जन जागरण का केंद्र बनता शाहजहांपुर खेड़ा बॉर्डर

संदीप मील

शाहजहांपुर खेड़ा बॉर्डर पर चल रहे किसान आंदोलन ने सांस्कृतिक रूप से जन जागरण का स्वरूप अख्तियार कर लिया है। इस आंदोलन में हरियाणवी, राजस्थानी और केरल सहित देश के विभिन्न हिस्सों की सांस्कृतिक मंडलियों ने अपनी जन जागृति की प्रस्तुति दी। एक पूरा दिन तो सांस्कृतिक प्रस्तुतियों का ही रखा गया था। यहां की कमेटी ने तय किया कि उस दिन भाषण नहीं होंगे बल्कि सांस्कृतिक रूप से किसानों के संघर्ष की बातों को सामने लाया जाएगा। करौली और सवाई माधोपुर के लोक कलाकारों ने अपने लोक कला की प्रस्तुति दी। इसी तरह से राजस्थान के अन्य हिस्सों के कलाकारों ने हरियाणा के कलाकारों ने और केरल के कलाकारों ने अपनी प्रस्तुति दी।

पिछले दिनों राजस्थान के पूर्वी हिस्से ने साहस से उठकर शाहजहांपुर खेड़ा के किसान आंदोलन को मजबूत किया है। इस इलाके में सवाई माधोपुर, करौली और दौसा में किसान महापंचायतें हुई और उन महापंचायतों के प्रभाव से हजारों हजार लोग किसान आंदोलन में उमड़ पड़े। यह लोग आंदोलन को पूरी तरीके से समर्थन दे रहे हैं और यहां के सारे किसान खुद जाकर गांव के दूसरे किसानों को जगा रहे हैं। इसलिए अभी राजस्थान में जिस तरीके से टोल फ्री का अभियान चलाया गया है, उसमें पूर्वी राजस्थान से लेकर सुदूर पश्चिम राजस्थान की सीमा तक, राजस्थान की उत्तरी सीमा से लेकर दक्षिण में गुजरात की सीमा से लगे डूंगरपुर-बांसवाड़ा तक फैल गया है। अभी पिछले दिनों दौसा और सुनहरा में हुई महापंचायतों ने यह संदेश दे दिया है कि पूर्वी राजस्थान का किसान अब इस आंदोलन से कंधे से कंधा मिला चुका है।उन्हें किसी तरह की जात-धर्म के बंटवारे की राजनीति इस किसान आंदोलन से दूर नहीं कर सकती। आप देखेंगे कि इस तरीके से बॉर्डर के आंदोलन का धर्मनिरपेक्ष स्वरूप बनता जा रहा है। एक तरफ आप मेवाती ढाबे पर मेवाती चाय पी रहे हैं, फिर हनुमानगढ़ के लंगर में आप जलेबी खा रहे हैं या बाबा के लंगर का हलवा खा रहे हैं। इसमें पूरे तरीके से किसानी संस्कृति ने अपने अपना स्वरूप अख्तियार किया है। इस मोर्चे पर अलग-अलग हिस्सों से लोग अपना समर्थन और सहयोग दे रहे हैं। जिसमें पिछले दिनों राजस्थान के बहुत से हिस्सों सीकर, गंगानगर, हनुमानगढ़ के वकीलों ने किसान आंदोलन का पुरजोर समर्थन किया और सहयोग किया। इसी तरीके से किसान आंदोलन अपने स्वरुप को बढ़ाते हुए आदिवासियों को भी अपने आंदोलन में शामिल कर पा रहा है। आदिवासी अधिकार मंच ने भी किसान आंदोलन को पूरा समर्थन दिया और जन विरोधी कानूनों के खिलाफ संघर्ष के मैदान में उतरने का वादा किया।

इस आंदोलन का विस्तार राजस्थान के गांव गांव में करने के लिए किसानों की टोलियां और किसानों के जत्थे गांव-कस्बों में जा रहे हैं।स्थानीय स्तर पर जिस तरीके से टोलों पर छोटे-छोटे धरने लग रहे हैं वे धरने आपको सीकर से लेकर हनुमानगढ़ गंगानगर सहित राजस्थान के तमाम इलाकों में मिल जाएंगे। जहां किसान अपने टेंट और तंबू लगाकर बैठे हैं और गांव से लोग उनके लिए खाना ला रहे हैं। उनका समर्थन कर रहे हैं। इससे किसान आंदोलन को गांव-गांव तक पहुंचाने की कोशिश कर रहे हैं। गांवों में पर्चे बांटे जा रहे हैं और लोग इससे जुड़ते जा रहे हैं।

इसी तरीके से शाहजहांपुर बॉर्डर पर अभी हाल ही में राजस्थान के सभी जिलों से छात्रों का एक जत्था स्टूडेंट फेडरेशन ऑफ इंडिया के नेतृत्व में मोर्चे पर अपना शिविर लगाया है जिसमें किसानों के लड़के और लड़कियां शामिल हैं जो विद्यार्थी हैं। वे अब इस आंदोलन में यहां पर अपना सहयोग भी करेंगे और अपनी पढ़ाई के साथ संघर्ष सीखेंगे। जो बातें किताबों में लिखी गई हैं उन संविधान की बातों पर हमला होता है तो उनको जब दबाया जाता है, हमारे अधिकारों को पर हमला किया जाता है तब शांतिपूर्ण तरीके, लोकतांत्रिक तरीके से लोकतंत्र और संवाद को बचाने के अभ्यास को सीखा जाए। वे अब यहां सिद्धांत और व्यवहार के संगम में आए हैं जहां से वे बहुत समृद्ध अनुभव लेकर जाएंगे और ये आने वाले राजस्थान की युवा पीढ़ी को एक नया रास्ता दिखाने में कामयाब होंगे।

यहां पर जो लोग बहुत दिनों से आंदोलन में थे, वे जब घर जा रहे हैं तो गांव से दूसरे लोग उनकी जगह वहां पर आ रहे हैं। इसलिए मोर्चा लगातार न सिर्फ स्थाई रूप से टिका हुआ है बल्कि समृद्ध और मजबूत हो रहा है। इसका सबसे बड़ा प्रभाव किसानों की चेतना की समृद्धि में देखा जा सकता है। उनकी समझ में विस्तार देखा जा सकता है। मोर्चे पर जिस तरीके से लोग पढ़ रहे हैं, एक-दूसरे से बात कर रहे हैं। राजस्थान और भारत के किसान के इतिहास पर बातें हो रही हैं। किसान की संस्कृति पर बात हो रही है। लोक संगीत और लोक कथाओं पर चर्चा हो रही है। इसी तरीके से दुनिया में हुए किसान आंदोलनों पर संवाद होता है। भारत में होने वाले किसान आंदोलनों की परंपरा को समझ रहे हैं। लोग होली में गाए जाने वाले धमलों की नया सर्जन कर रहे हैं जो पूरी तरह से किसान आंदोलन पर केंद्रित हैं।

धार

अरुण कमल

कौन बचा है जिसके आगे
इन हाथों को नहीं पसारा

यह अनाज जो बदल रक्त में
टहल रहा है तन के कोने-कोने
यह कमीज़ जो ढाल बनी है
बारिश सरदी लू में
सब उधार का, माँगा चाहा
नमक-तेल, हींग-हल्दी तक
सब कर्जे का
यह शरीर भी उनका बंधक

अपना क्या है इस जीवन में
सब तो लिया उधार
सारा लोहा उन लोगों का
अपनी केवल धार ।

किसान महापंचायतों का विवरण इस तरह है

17 फरवरी	भीखी, मानसा, पंजाब
18 फरवरी	रेल रोको, देश भर में, 12-4
18 फरवरी	रायसिंह नगर, श्री गंगानगर, राजस्थान
19 फरवरी	हनुमानगढ़, राजस्थान
21 फरवरी	बरनाला, पंजाब
23 फरवरी	सीकर, राजस्थान

शिव कुमार के साथ मेरा सफ़र: एक प्यारी मुस्कान के पीछे गंभीर कार्यकर्ता और पुलिस की ज्यादती

जसमिंदर टिन्कू

आज से साढ़े पांच साल पहले मैं शिव कुमार के साथ जेल में रहा था। लगभग 16 दिन हम दोनों ने सोनीपत जेल में एक ही बैरक में बिताए। मैंने पहली बार देखा कि कैसे जाति की वजह से उसे सफाई के काम के लिए बार बार कहा जाता और हमने इस मानसिकता के खिलाफ संघर्ष किया। उस समय भी हमें झूठे केस में ही फंसाया गया था। हत्या का प्रयास, निजी संपत्ति में आगजनी, महिला शिक्षक की साड़ी फाड़ने जैसे संगीन आरोप हमारे ऊपर लगाए गए थे। कुल 40 महिला पुरुष गिरफ्तार किये गये थे, 26 महिलाएं और 14 पुरुष।

शिक्षा के अधिकार की धारा 134-A1 के तहत गरीब बच्चों को निजी स्कूलों में दाखिले के लिए संघर्ष पूरे हरियाणा में चला हुआ था। सोनीपत में हम छात्र एकता मंच की तरफ से इस संघर्ष का हिस्सा थे। निजी स्कूलों की पढ़ाई के नाम पर मचाई जा रही लूट के खिलाफ चल रहा ये संघर्ष तीखा हो गया। अभिभावकों और छात्रों की एकता के आगे प्रशासन को झुकना पड़ा और गरीब बच्चों को कानून के अनुसार 15% और 20% मुफ्त दाखिले देने पड़े जिसकी वजह से सोनीपत के सारे प्राइवेट स्कूल की मंडियों के मालिकों ने एका कर लिया और साथ लिया कुछ तथाकथित राष्ट्रभक्त राजनेताओं को। जिन मंत्रियों को जनता का साथ देना चाहिए था उन्होंने लुटेरों के साथ मिलकर जनता के खिलाफ साजिश की और पुलिस के साथ गठजोड़ करके झूठे मुकदमों के तहत अभिभावकों और छात्रों को जेल में डाल दिया गया। लेकिन जनता की एकता और संघर्ष की जीत हुई थी और हम सब जेल से बाहर आये थे।

उन 16 दिनों में हम खूब पढ़े। एक दूसरे से सीखा और सिखाया। हमें समझ आ गया था कि जब हम अन्याय के खिलाफ एकजुट होकर संघर्ष करेंगे तो राजनेता, पुलिस और लुटेरे एका करके न्याय के लिए लड़ने वालों को ऐसे ही जेल में डालेंगे, मारपीट करेंगे शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से तोड़ने की कोशिश करेंगे और इससे निपटने का जो रास्ता है वो है: जनता की जागरूकता,एकता और जुझारू संघर्ष। जेल से बाहर आने के बाद भी ये संघर्ष हमेशा जारी रहा। हमने बहुत सारे संघर्ष साथ में किये हैं और गिरफ्तारी भी हुई हैं। शिवा ने सोनीपत आईटीआई से पढ़ाई करने के बाद कुण्डली औद्योगिक क्षेत्र में कंपनियों में काम करना शुरू किया। कंपनियों में मजदूरों की हालत से रूबरू होने के बाद, इन हालात को बदलने के लिए ही शिव कुमार ने मजदूर अधिकार संगठन की नींव डाली जो इस क्षेत्र के मजदूरों की आवाज बनी। इन्होंने दिन रात मेहनत करके मजदूरों के हक की आवाज को बुलंद किया जिसकी वजह से ये संगठन और इसके सदस्य कंपनी मालिकों, कंपनियों के प्राइवेट गुंडों और पुलिस को खटकने लगे थे। किसान आंदोलन में भी यें संगठन पूरे जी जान से सक्रिय हुआ। इन्होंने मजदूरों को समझाना शुरू किया कि अगर खेती में भी कंपनियां आई तो बुनियादी जरूरत की चीजें और भी ज्यादा महंगी हो जायेंगी जिसकी वजह से मजदूर की जिंदगी और भी कठिन हो जाएगी। सैंकड़ों से लेकर हजारों की संख्या तक मजदूरों ने किसानों के समर्थन में प्रदर्शन किए। किसान मजदूर एकता के नारे को मजदूर अधिकार संगठन ने किसान मोर्चे के स्टेज से उतारकर जमीन पर लागू किया। इसके साथ ही उन्होंने मजदूरों की ठेकेदारों और कंपनियों द्वारा हड़पी गई दिहाड़ी वापिस दिलवाने का संघर्ष भी जारी रखा और 150 से ज्यादा मजदूरों की साढ़े पांच लाख रूपए के आस पास दिहाड़ी वापस भी दिलवाई। मजदूरों ने लेबर कोर्ट और पुलिस थानों में समय गंवाने के बजाय संघर्ष का रास्ता अपनाना शुरू कर दिया था। मजदूरों की इसी राजनीतिक चेतना से डरकर पुलिस ने ये कार्यवाही शिवा और नौदीप पे की है।

जो आज शिव कुमार के साथ जो हो रहा है उससे वह पहले से ही परिचित है। सारे कानूनों को ताक पर रखकर पुलिस ने बदले की भावना के तहत कंपनी मालिकों के निजी गुण्डों की तरह काम किया है। शिव कुमार का 16 जनवरी को पुलिस ने अपहरण किया। उसके साथ लगातार सात दिन तक मारपीट की गई। ऐसी यातनाएं दी गईं जिनको लिख पाना भी मुश्किल हो रहा है। न तो उसके घरवालों को बताया गया न ही उनके संगठन के साथियों को। 24 जनवरी को उसे कोर्ट ले जाया गया और कोर्ट ने बिना शिव कुमार का पक्ष सुने 10 दिन का रिमांड दे दिया जबकि दस दिन का रिमांड आतंकियों का भी नहीं लिया जाता। 24 जनवरी को रात 9:30 बजे पुलिस वाले शिव कुमार के घर जाकर बोलते हैं कि अगर शिव कुमार आये तो उसको पेश कर देना और इतना बोलकर शिव कुमार की मां से दस्तखत करवा लेते हैं। इसका मतलब है कि पुलिसकर्मी शिवा की मां से जो दस्तखत करवा कर लाये हैं उसी के आधार पर कोर्ट में साबित करेंगे कि उन्होंने शिवा के घरवालों को सूचित कर दिया था जबकि उन्हें गुमराह किया गया। दस दिन के रिमांड के बाद यानी कि 2 फरवरी को शिवा को न्यायिक हिरासत में सोनीपत जेल में बंद कर दिया गया है। आज तक उससे न तो वकील को मिलने दिया गया है और न ही उसके घरवालों से। शायद प्रशासन उसके जख्म भर जाने का इंतजार कर रहा है।

पुलिस की ऐसी हरकतें क्या सन्देश देती हैं? जब गरीब आदमी हक के लिए लड़ता है तो उसे खूंखार अपराधी की तरह पेश किया जाता है लेकिन पुलिस जो बर्बरता करती है उसका हमारे समाज में सामान्यीकरण हो चुका है। इसी सामान्यीकरण का शिकार शिव कुमार है और इसी सामान्यीकरण से उसका संघर्ष भी है। हम सभी को इस सामान्यीकरण को तोड़ना जरूरी है।

शिव कुमार के परिवार की हालत
शिव कुमार के पिताजी सरकारी स्कूल के चौकीदार हैं जिनको हर महीने सिर्फ सात हजार रुपए ही मिलते हैं। कभी कभी दिन में खुली दिहाड़ी भी कर लेते हैं। मां सामान्य गृहिणी हैं। शिवा की तीन बहनें हैं और एक भाई है। 24 साल का शिवा पांच भाई बहनों में तीसरे नंबर का है। दो बड़ी बहनें हैं। सात सदस्यीय ये परिवार कितनी मुश्किल से गुजर बसर करता होगा? इसका सिर्फ अनुमान लगाया जा सकता है।एक तो आर्थिक तंगी ऊपर से तथाकथित छोटी जाति का ठप्पा ज़िन्दगी को जितना मुश्किल बाहर बना देता है उससे कहीं ज्यादा मुश्किल जेल के भीतर होता है। फिर भी शिवा ऐसे ही मुस्कुराता है और इसकी यहीं मुस्कान मुझ जैसे अनेकों को प्रेरित करती है और विरोधियों को परेशान।

शिव कुमार का संघर्ष बेहतर समाज के लिए है, इसलिए ये संघर्ष हम सबका संघर्ष है।

तेलंगाना किसान आंदोलन

शिवम मोघा

तेलंगाना विद्रोह को औपचारिक रूप से वेट्टी चकिरी उदयम / तेलंगाना बंधुआ मजदूर आंदोलन के रूप में जाना जाता था। इसे तेलंगाना रायतांगा सयुध पोराटम (तेलंगाना किसान सशस्त्र संघर्ष) भी कहा जाता था। यह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में तेलंगाना क्षेत्र के दमनकारी सामंती प्रभुओं / जमींदारों के खिलाफ और बाद में 1946-1951 के बीच हैदराबाद के निजाम के निरंकुश शासन के खिलाफ एक साम्यवादी-नेतृत्व वाला सशस्त्र किसान विद्रोह था। आंदोलन की सबसे मुखर मांग किसानों के कर्ज माफ करना तथा जमीन पर जोतने वाले का मालिकाना हक़ की बात थी।

भारत में किसानों की पीड़ा, द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत के साथ तेज हो गई थी, क्योंकि किसानों को शोषणकारी करों(लगान) और लेवी के अधीन किया गया था और उन्हें 'वीटीटी' (मजबूर श्रम) करने के लिए मजबूर किया गया था। यह गरीब किसान थे जो सबसे अधिक प्रभावित हुए थे, क्योंकि कई गरीब किसान करों, और गाँव के साहूकारों के लिए अपनी जमीन खोने का बोझ उठाने में असमर्थ थे। आंदोलन के नेताओं ने महसूस किया कि इस क्षेत्र के भूमिधारकों(भूमि के असली मालिक) के साथ घोर अन्याय हुआ है और तेलंगाना की तत्कालीन रियासत के जमींदारों और शासकों द्वारा उनका बहुत शोषण किया गया। आंदोलन के महत्वपूर्ण नेताओं में से चकली इलम्मा थी, उन्होंने जमींदार रामचंद्र रेड्डी के खिलाफ विद्रोह किया था. चकली इल्लम्मा ने अपनी 4 एकड़ जमीन वापस लेने की लड़ाई लड़ी और उनके इस विद्रोह से प्रभावित होकर कई लोगों आंदोलन में शामिल होने के लिए प्रेरित हुयें।

तेलंगाना में विद्रोह डोड्डी कोमारय्या की हत्या के बाद बढ़ा , वो आंध्र महासभा नामक एक पार्टी क कार्यकर्ता थे। यह विद्रोह 5 साल तक चला। सामंती निजी सेनाओं / भाड़े के सैनिकों के साथ संघर्ष में लगभग 4000 किसानों ने अपनी जान गंवाई। कम्युनिस्टों का प्रारंभिक उद्देश्य बंधुआ मजदूरी के नाम पर इन सामंती प्रभुओं द्वारा किए गए अवैध और अत्यधिक शोषण से दूर करना था लेकिन बाद में किसानों द्वारा लिए गए सभी ऋणों को हटाने की मांग जोर पकड़ने लगी। कम्युनिस्ट पार्टी पर निज़ाम की पुलिस द्वारा किए गए हमलों और बाद में 3 दिसंबर, 1946 को कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रतिबंध लगा दिया गया। किसानो को दबाने के लिए, रजाकार- मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन के मिलिशिया- निज़ाम की सेना में शामिल हो गए. इस पुरे आतंक के बावजूद, कम्युनिस्टों ने वारंगल, खम्मम और नलगोंडा जिलों में एक समानांतर सरकार स्थापित करने में सफलता हासिल की। बड़े जमींदार, जो ग्रामीण क्षेत्रों में निज़ाम की निरंकुशता के आधार थे, उनको, उनके किले जैसे घरों से बाहर निकाल दिया गया था, और उनकी ज़मीनों को किसानों द्वारा जब्त कर लिया गया था। कम्युनिस्ट के नेतृत्व वाले आंदोलन ने 3000 से अधिक गाँवों को क्रूर सामंतों से मुक्त कराने में सफलता प्राप्त की और भूमिहीन किसानों को लगभग 10,000 एकड़ कृषि भूमि वितरित की गई।

फरवरी 1948 में, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने, अपराधियों को पकड़ने के उद्देश्य से एक नई नीति गुर्रिला नीति पेश की थी, और यह काफी हद तक तेलंगाना विद्रोह की सफल बनाने में सहायता दी। गाँव में भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को भूमि का पुनर्वितरण भी शुरू कर दिया, जिससे तेलंगाना आंदोलन की लोकप्रियता बढ़ गई। अगस्त 1948 के अंत तक, लगभग 10,000 छात्रों, किसानों और पार्टी कार्यकर्ताओं ने खुद को गांव के दस्तों में सक्रिय रूप से शामिल कर लिया, और लगभग 2,000 छोटे छापामार दस्ते बनाए गए। 13 सितंबर, 1948 को भारतीय सरकार ने हैदराबाद के खिलाफ पुलिस कार्रवाई शुरू की, और ऑपरेशन पोलो के तहत हैदराबाद का विलय भारत में कर लिया गया. लेकिन फिर भी वहां के कम्युनिस्ट नेता किसानो के हक़ के लिए लड़ते रहे, कम्युनिस्टों द्वारा इन गतिविधियों को सरकार द्वारा गैरकानूनी घोषित किया गया और पार्टी पर प्रतिबंध लगा दिया गया था और कम्युनिस्ट पार्टी के कई नेताओं को या तो भूमिगत होने के लिए मजबूर किया गया था या कैद कर लिया गया था।

इस विद्रोह का जनता पर व्यापक प्रभाव पड़ा और इसने 1952 के चुनावों में आंध्र प्रदेश में कम्युनिस्ट पार्टी की जीत सुनिश्चित की। भारत में भूमि सुधारों को एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप में मान्यता दी गई थी और उन्हें लागू करने के लिए विभिन्न अधिनियम पारित किए गए थे। भूमिहीन के बीच भूमि का पुनर्वितरण किया गया; निष्कासन रोक दिए गए और वीटी-चकीरी(किसान श्रम) को समाप्त कर दिया गया. सूदखोरी, शोषण और अत्यधिक दरों को या तो बहुत कम कर दिया गया या पूरी तरह से प्रतिबंधित कर दिया गया| खेतिहर मजदूरों की दैनिक मजदूरी में वृद्धि की गई और न्यूनतम मजदूरी लागू की गई. इस आंदोलन में सबसे बड़ी बात यह रही की, कईं महिलाओ ने इस आंदोलन को आगे बढ़ने में सक्रिय भूमिका निभाई|

NEWS FROM TROLLEYS

ਟਰਾਲੀ ਟਾਈਮਜ਼

ਅੰਦੋਲਨ ਦੀ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ਼

VOICE OF KISAN PROTEST 2020 | TROLLEY TIMES | VOL 1. edition No. 10 | TUESDAY, FEBRUARY 16TH, 2021

ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਏਕੇ ਅਤੇ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦਾ ਸਵਾਲ

ਕੰਵਲਜੀਤ ਸਿੰਘ

ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਿਚਲੀ ਬਹਿਸ ਦਾ ਝੁਕਾਅ, ਖਾਸਕਰ 26 ਜਨਵਰੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ, ਖੇਤੀ ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਦੇ ਨਫ਼ੇ ਨੁਕਸਾਨਾਂ ਤੋਂ ਅੱਗੇ ਵੱਧ ਕੇ ਘੋਲ ਦੇ ਢੰਗ ਤਰੀਕਿਆਂ ਵੱਲ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਸ ਬਹਿਸ ਵਿਚ ਕੁਝ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਉਭਰੀਆਂ ਹਨ - ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਅਤੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਦਾ ਏਕਾ।

ਅਸੀਂ ਸਭ ਜਾਣਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਨਿੱਤ ਦੀਆਂ ਮੰਗਾਂ ਦੁਆਲੇ ਲੰਬੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਚਲੇ ਆ ਰਹੇ ਧਰਨੇ ਮੁਜਾਹਰਿਆਂ ਤੋਂ ਵੱਖਰਾ ਜੇ ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਿਚ ਕੁਝ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਿਆ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਘੜਵਾਂ ਤੱਥ ਹੈ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀ ਲਾ-ਮਿਸਾਲ ਸ਼ਮੂਲੀਅਤ। 26 ਜਨਵਰੀ ਨੂੰ ਇੱਕ ਵੱਡੇ ਹਿੱਸੇ ਵੱਲੋਂ ਤਹਿ ਰੂਟ ਦੀ ਬਜਾਏ ਲਾਲ ਕਿਲੇ ਵੱਲ ਚਲੇ ਜਾਣ ਅਤੇ ਉਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਹੋਈਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਬਾਰੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਦੇਸ਼ਾਂ-ਵਿਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿਚਲੇ ਇੱਕ ਜਿਕਰਯੋਗ ਹਿਮਾਇਤੀ ਹਿੱਸੇ ਨੇਂ ਸਪਸ਼ਟ ਮਤ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਬਜਾਏ ਆਪਣੀ ਗੱਲ ਕੁਝ ਇਸ ਤਰਾਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀ ਹੈ ਕਿ "ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਉਂਜ ਤਾਂ ਬਹੁਤ ਸਿਆਣੀ ਹੈ ਲੇਕਿਨ ਇਸ ਨੂੰ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦਾ ਵੀ ਖਿਆਲ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ" ਇਸ ਫਾਰਮੂਲੇਸ਼ਨ ਵਿਚ ਸੁਤੇ-ਸਿੱਧ ਹੀ ਇਹ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ ਕਿ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਸਬੰਧੀ ਕੋਈ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ 'ਭਾਵਨਾਂਵਾਂ' ਹਨ ਜੋ ਬਾਕੀਆਂ ਦੇ ਮਨਾਂ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਹਨ। ਸਵਾਲ ਇਹ ਵੀ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਕੀ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਇਹ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਿਚ ਉਤਰੇ ਬਾਕੀ ਸਭ ਹਿੱਸਿਆਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਨਾਲ ਟਕਰਾਵੀਆਂ ਹਨ?

ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦੇ ਦਰਿਆ ਤਾਂ ਪੰਜਾਬ, ਹਰਿਆਣਾ, ਯੂਪੀ, ਉਤਰਾਂਚਲ ਅਤੇ ਹੋਰਨਾਂ ਰਾਜਾਂ ਤੋਂ ਦਿੱਲੀ ਵੱਲ ਨੂੰ ਵਹਿ ਰਹੇ ਹਨ ਅਤੇ ਲੋਕਾਈ ਦਾ ਇਹ ਸਮੁੰਦਰ ਹੈ ਜੋ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਚੜ੍ਹਾਅ ਅਤੇ ਉਤਰਾਅ ਨਾਲ ਹੀ ਫੈਲਦਾ ਤੇ ਸੁੰਗੜਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚ ਘਰਾਂ ਨੂੰ ਕੁੰਡਾ ਮਾਰ ਕੇ ਪਿੰਡੋਂ ਆਉਂਦੀ ਟਰਾਲੀ ਤੇ ਚੜ੍ਹ ਆਏ ਬਜ਼ੁਰਗ ਵੀ ਹਨ, ਮੋਟਰ ਸਾਈਕਲ ਤੇ ਸਿੰਘਣੀ ਅਤੇ ਦੋਵੇਂ ਧੀਆਂ ਨੂੰ ਬਿਠਾ ਕੇ ਚਾਰ ਸੌ ਕਿਲੋ ਮੀਟਰ ਗਾਹ ਆਏ ਨੌਜਵਾਨ ਜੋੜੇ ਵੀ ਹਨ ਅਤੇ ਇੱਕ ਟਰੈਕਟਰ ਪਿੱਛੇ ਦੋ ਦੋ ਟਰਾਲੀਆਂ ਪਾ ਕੇ ਜੌਹਰ ਦਿਖਾਉਂਦੇ ਆਏ ਗੱਭਰੂ ਵੀ ਹਨ। ਬਿਨਾਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਤੋਂ ਕੋਈ ਨਹੀਂ ਆਇਆ। ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਇਹ ਜਰੂਰ ਹਨ ਕਿ ਔਖੇ ਤੇ ਜੋਖਮ ਭਰੇ ਕੰਮ, ਜਿਵੇਂ ਰਾਤ ਦਾ ਪਹਿਰਾ, ਬੈਰੀਕੇਡ ਹਟਾਉਣ ਵਿਚ ਉਹ ਸਿਆਣੇ ਸਰੀਰਾਂ ਨਾਲੋਂ ਮੂਹਰੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਰਹਿਣ ਵੀ ਕਿਓਂ ਨਾ? ਤੇ ਸੱਚ ਤਾਂ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਰਾਤ ਨੂੰ ਇੱਕ ਗੇੜਾ ਕਿਸੇ ਵੀ ਬਾਡਰ ਤੇ ਮਾਰ ਕੇ ਵੇਖਿਆਂ ਹੀ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਵੇਗਾ ਕਿ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਾਵਨਾਂਵਾਂ ਦਾ ਭਰਪੂਰ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਫਿਰ ਉਹ ਕਿਹੜੇ ਮੌਕੇ ਹਨ ਜਿਸ ਵਿਚ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦਾ ਖਿਆਲ ਨਾ ਰੱਖੇ ਜਾਣ ਦੀ ਸ਼ਿਕਾਇਤ ਆ ਰਹੀ ਹੈ ? ਉਹ ਹਨ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਵੱਲੋਂ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਐਕਸ਼ਨਾਂ ਸਬੰਧੀ ਲਏ ਜਾਂਦੇ ਫੈਸਲੇ! ਸਗੋਂ ਲੇਖਕ ਸਭ ਨੂੰ ਅਪੀਲ ਕਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਆਓ! ਇਨ੍ਹਾਂ ਫੈਸਲਿਆਂ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਵਨਾਂ ਤੋਂ ਅਜਾਦ, ਠੋਸ/ਵਸਤੂਗਤ ਹਾਲਤਾਂ ਦੇ ਠੋਸ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਤੇ ਟਿਕੇ ਰਹਿਣ ਦਈਏ! ਸਗੋਂ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਫੈਸਲਿਆਂ ਦੇ ਸਹੀ ਅਤੇ ਗ਼ਲਤ ਹੋਣ ਸਬੰਧੀ ਸਭ ਮੁਲਾਂਕਣ ਅਤੇ ਅਗਲੇ ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਫੈਸਲਿਆਂ ਸਬੰਧੀ ਸਭ ਸੁਝਾਅ ਵੀ, ਇਸੇ ਠੋਸ ਪੈਮਾਨੇ ਤੇ ਦਈਏ। ਫੇਸਬੁੱਕ ਉਪਰਲੀ ਚਰਚਾ ਵਿਚ ਜਿਸਨੂੰ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦਾ ਨਾਂ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਉਹ ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਇੱਕ ਨਿੱਕੇ ਹਿੱਸੇ ਵੱਲੋਂ ਤੁਰਤ-ਫੁਰਤ, ਮੌਕਾ-ਬੇਮੌਕਾ ਆਰ-ਪਾਰ ਦੀ ਲੜਾਈ ਦੇ ਫੈਸਲੇ ਲੈਣ ਦੀ ਆਪਮੁਹਾਰੀ ਤੱਦੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਕਿ ਬਹੁਗਿਣਤੀ, ਸੰਯੁਕਤ ਕਿਸਾਨ ਆਗੂਆਂ ਵੱਲੋਂ ਤੈਅ ਢੰਗ ਤਰੀਕਿਆਂ ਨੂੰ ਵਧੇਰੇ ਕਾਰਗਾਰ ਸਮਝ ਰਹੀ ਹੈ।

ਦੂਜਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਨੁਕਤਾ ਹੈ ਸੰਘਰਸ਼ਸ਼ੀਲ ਤਾਕਤਾਂ ਦੇ ਏਕੇ ਦਾ ਸਵਾਲ। ਸੱਚ ਤਾਂ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਲੋਕਾਈ ਦੇ ਵਿਸ਼ਾਲ ਏਕੇ ਦੇ ਸਦਕਾ ਹੀ ਇਹ ਸੰਘਰਸ਼ ਮਹੀਨਿਆਂ ਬਧੀ ਟਿਕਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਅਤੇ ਸਾਲਾਂ ਬਧੀ ਚੱਲਣ ਦਾ ਦਮ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਲੇਕਿਨ ਫਿਰ ਵੀ ਇਹ ਸਵਾਲ ਉਠਾਇਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਨੂੰ 'ਹੋਰਨਾਂ' ਹਿੱਸਿਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਨਾਲ ਲੈ ਕੇ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਏਕਾ ਕਰ ਕੇ ਚਲਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਉਪਰਲੇ ਨੁਕਤੇ ਵਾਂਗ ਇਹ ਸਵਾਲ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕਾਂ ਵੱਲੋਂ ਉਠਾਇਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਜੋ ਇੱਕ ਪਾਸੇ ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਵੱਲੋਂ 26 ਜਨਵਰੀ ਨੂੰ ਪਰੇਡ ਲਈ ਲਏ ਗਏ ਪੰਜ ਰੂਟਾਂ ਤੇ ਪੁਰਅਮਨ ਪਰੇਡ ਕਰਨ ਦੇ ਫੈਸਲੇ ਨੂੰ ਵੀ ਸਹੀ ਮੰਨਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਕੁਝ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਵੱਲੋਂ ਲਾਲ ਕਿਲੇ ਵੱਲ ਕੀਤੇ ਕੂਚ ਨੂੰ ਵੀ "ਚੱਲ ਕੋਈ ਗੱਲ ਨੀ" ਕਹਿ ਕੇ ਛੱਡ ਦੇਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਸੁਹਿਰਦ ਸਮਰਥਕਾਂ ਨੂੰ ਜੇਕਰ ਇੱਕ ਸਵਾਲ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ ਕਿ ਏਕਾ ਕਿਨ੍ਹਾਂ ਦਰਮਿਆਨ? ਜਵਾਬ ਹੋਵੇਗਾ ਦੀਪ, ਲੱਖਾ ਅਤੇ ਪੰਧੇਰ ਆਦਿ ਨਾਲ ਸੰਯੁਕਤ ਮੋਰਚੇ ਦਾ ਏਕਾ। ਹਾਲਾਂਕਿ ਇਸ ਮਸਲੇ ਤੇ - ਤਲਖ਼ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਸੁਹਿਰਦ - ਸਭ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਰਾਅਵਾਂ ਹਨ ਲੇਕਿਨ ਇਸ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਪ੍ਰਮਾਣਿਤ ਰੂਪ ਇਸ ਦਲੀਲ ਵਿਚ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਨਿਸ਼ਾਨਾ ਇੱਕ ਹੈ ਤਾਂ ਏਕਾ ਬਣਨਾ ਹੀ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਲੇਕਿਨ ਰਸਤੇ ਦੋ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਅਜਿਹਾ ਨਹੀਂ ਹੋ ਰਿਹਾ।

ਦੋ ਰਾਹ ਕੀ ਹਨ? ਸਾਂਝੇ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਭਾਰੂ ਸਮਝਦਾਰੀ ਦਾ ਇਹ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਹੁਣ ਤੱਕ ਦੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੇ ਵਿਖਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਕਿ ਘੋਲ ਦੇ ਜਾਬਤਾਬੱਧ ਹੋਣ, ਲੋਕਾਈ ਦੀ ਵਿਸ਼ਾਲ ਭਾਗੀਦਾਰੀ ਹੋਣ ਅਤੇ ਲੋਕ ਰਾਇ ਦੇ ਕਦਮ ਦਰ ਕਦਮ ਵਧਣ, ਸਮਰਥਕ ਘੇਰੇ ਦੇ ਵਿਸ਼ਾਲ ਦਰ ਵਿਸ਼ਾਲ ਹੁੰਦੇ ਚਲੇ ਜਾਣ ਦੇ ਬੁਨਿਆਦੀ ਅਧਾਰ ਕੀ ਹਨ। ਇਹ ਹਨ ਇਸ ਘੋਲ ਦਾ ਪੁਰ-ਅਮਨ ਹੋਣਾ ਅਤੇ ਲੰਬਾ ਅਤੇ ਲਮਕਵਾਂ ਹੋਣਾ। ਸੋ ਇਹ ਸਮਝਦੇ ਹਨ ਕਿ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਇਸੇ ਤਰਾਂ ਟਿਕਾਈ ਰੱਖਣਾ ਅਤੇ ਓਦੋਂ ਤੱਕ ਟਿਕਾਈ ਰੱਖਣਾ ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਵਧਦਾ ਸਮਰਥਨ ਅਤੇ ਮੋਦੀ ਸਰਕਾਰ ਦੀ ਦੇਸ਼-ਵਿਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਵੱਧਦੀ ਅਲਾਇਹਦਗੀ ਉਸ ਨੂੰਕ਼ਾਨੂਨ ਵਾਪਿਸ ਲੈ ਲੈਣ ਲਈ ਮਜਬੂਰ ਨਹੀਂ ਕਰ ਦਿੰਦੇ।

ਦੂਜੇ ਰਾਹ ਦੀ ਵਕਾਲਤ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਲੋਕ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇਥੇ ਬੈਠੇ ਰਹਿਣ ਨਾਲ ਕੀ ਹੋਵੇਗਾ? ਹੁਣ ਤੱਕ ਮਿਲ ਚੁੱਕਿਆ ਜਨ ਸਮਰਥਨ ਇਸ ਗੱਲ ਲਈ ਕਾਫੀ ਹੈ ਕਿ ਹੁਣ ਕੋਈ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮੌਕਾ ਚੁਣ ਕੇ ਆਰ-ਪਾਰ ਦਾ ਹੱਲਾ ਬੋਲਿਆ ਜਾਵੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਹੱਲੇ ਦੇ ਦਬਾਅ ਹੇਠ ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਝੁਕਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। 26 ਜਨਵਰੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਅਜਿਹਾ ਹੀ ਇੱਕ ਮੌਕਾਜਾਪਦਾ ਸੀ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਲੋਕਾਈ ਵੱਲੋਂ ਮਿਲ ਰਹੇ ਸਮਰਥਨ ਦੇ ਕਾਰਨਾਂ ਨੂੰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਬਹੁਤਾ ਹਿੱਸਾ 'ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਨੇ ਕਲਾ ਵਰਤਾਈ' ਦੇ ਸਰਵਪ੍ਰਮਾਣਿਤ ਲਕਬ ਵਿਚ ਸਮੇਟ ਕੇ ਹੀ ਤਸੱਲੀ ਕਰਵਾਉਣਾ ਠੀਕ ਸਮਝਦਾ ਹੈ।

ਇਹ ਦੋ ਰਾਹ ਅਜਿਹੇ ਹਨ ਕਿ ਕੋਈ ਵੀ ਮੋਰਚਾ ਇੱਕੋ ਸਮੇਂ ਦੋਹਾਂ ਤੇ ਨਹੀਂ ਚੱਲ ਸਕਦਾ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੋ ਰਾਹਾਂ ਤੇ ਅਮਲ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਦੋ ਹਿੱਸੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰਹਿਣਗੇ। ਇਸ ਲਈ, ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਿਚ 'ਏਕਾ' ਕੋਈ ਮਕਾਨਕੀ ਏਕਾ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਪੂਰੇ ਵਿਵੇਕ ਨਾਲ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਢੰਗ ਤਰੀਕਿਆਂ ਦੀ ਚੋਣ ਅਤੇ ਅਮਲ ਦਾ ਮੁਲਾਂਕਣ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੋਵੇਗਾ। ਸਗੋਂ ਮਕਾਨਕੀ ਏਕਾ ਸਾਨੂੰ ਕਿਥੇ ਪਹੁੰਚਾ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਇਹ 26 ਤਰੀਕ ਤੋਂ ਪਹਿਲੀ ਸ਼ਾਮ ਇੱਕ ਗੁੱਟ ਵੱਲੋਂ ਸਟੇਜ ਤੇ ਕਬਜਾ ਅਤੇ ਫਿਰ ਅਗਲੇ ਦਿਨ ਹੋਈਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦਾ ਰਹੇਗਾ। ਜਰਾ ਸੋਚ ਕੇ ਦੇਖੋ ਅਗਰ ਲਾਲ ਕਿਲੇ ਵੱਲ ਜਾਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਸਾਂਝੇ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਪ੍ਰੋਗਰਾਮ ਵਾਲੇ ਦਿਨ ਦੀ ਬਜਾਏ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਦਿਨ ਸੁਤੰਤਰ ਰੂਪ ਵਿਚ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੁੰਦੀ ਤਾਂ ਕੀ ਸਾਰੇ ਘੋਲ ਨੂੰ ਫਿਰ ਵੀ ਅਜਿਹੀ ਹੀ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ ਪੈਂਦਾ ਜੋ 26 ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਕੁਝ ਦਿਨਾਂ ਲਈ ਕਰਨਾ ਪਿਆ ਸੀ? ਸ਼ਾਇਦ ਨਹੀਂ। ਮੌਜੂਦਾ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਨੂੰ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਵਧੇਰੇ ਤੋਂ ਵਧੇਰੇ ਲੋਕਾਈ ਦਾ ਪੁਰਅਮਨ, ਜਾਬਤਾਬੱਧ ਲੰਬੀ ਲੜਾਈ ਲਈ ਲੋੜੀਂਦਾ ਠਰੰਮਾ, ਦ੍ਰਿੜਤਾ ਅਤੇ ਦਲੇਰੀ ਹਿਰਦਿਆਂ ਵਿਚ ਲੈਕੇ ਮੋਰਚਿਆਂ ਤੇ ਟਿਕੇ ਰਹਿਣਾ ਹੀ ਅੱਜ ਦਾ ਸਹੀ ਪੈਂਤੜਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੇ ਚਲਦਿਆਂ ਅਸੀਂ ਹੁਣ ਤੱਕ ਅੱਗੇ ਵਧੇ ਹਾਂ ਅਤੇ ਜਿੱਤ ਵੀ ਯਕੀਨਨ ਸਾਡੀ ਹੋਵੇਗੀ, ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਝੁਕਣਾ ਹੀ ਪਵੇਗਾ।

ਵੱਖਰੇ ਰਾਹ ਦੀ ਮੁੱਦਈ ਧਿਰ ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੀ ਵੱਖਰੀ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਹ ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ 'ਹੋਂਦ' ਦੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ. ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਜਾਂ ਸਿਖਾਂ ਦੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਖਤਰੇ ਵਿਚ ਦੱਸ ਕੇ ਇਹ ਧਿਰ ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਅਣਸੁਲਝੇ ਪਏ ਦੇਸ਼ ਅੰਦਰਲੇ ਕੌਮੀਅਤਾਂ ਅਤੇ ਘੱਟ ਗਿਣਤੀਆਂ ਸਬੰਧੀ ਸਿਆਸੀ ਸਵਾਲ ਦੇ ਦੁਆਲੇ ਹੀ ਸੀਮਿਤ ਕਰ ਦੇਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਹੈ. ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਸੰਯੁਕਤ ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਇਸ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਕਾਰਪੋਰੇਟ ਪ੍ਰਸਤ ਸਰਕਾਰ ਵੱਲੋਂ ਸੰਸਾਰ ਪੱਧਰ ਦੇ ਕਾਰਪੋਰੇਟ ਘਰਾਣਿਆਂ ਦੇ ਦਬਾਅ ਹੇਠ, ਖੇਤੀ ਖੇਤਰ ਦੇ ਦਰਵਾਜੇ ਮੁਨਾਫ਼ੇਖੋਰੀ ਲਈ ਖੋਹਲ ਦੇਣ ਦੇ ਖਿਲਾਫ ਉੱਠੇ ਲੋਕ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਜੋਂ ਵੇਖਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਫੈਡਰਲ ਢਾਂਚੇ ਦੇ ਉਲੰਘਣ 'ਤੇ ਮੋਦੀ ਸਰਕਾਰ ਦੀ ਕ਼ਾਨੂਨ ਸਾਜੀ ਦੇ ਇੱਕ ਉੱਘੜਵੇਂ ਪਹਿਲੂ ਵਜੋਂ ਉਂਗਲ ਧਰਦੀ ਹੈ। ਸੋ ਕੁਝ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਜਾਂ ਧਿਰਾਂ ਨਾਲ ਮਕਾਨਕੀ ਅਤੇ ਸਤਹੀ ਏਕਾ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਗ਼ਲਤ ਜਾਂ ਅਧੂਰੀਆਂ ਸਮਝਦਾਰੀਆਂ ਅਤੇ ਰਾਹਾਂ ਦਾ ਨਿਖੇੜਾ ਅਤੇ ਲੋਕਾਈ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾਲ ਏਕਾ ਹੀ ਅੱਗੇ ਵਧਣ ਦਾ ਰਾਸਤਾ ਹੈ।

ਜਵਾਕ ਤਾਂ ਝੂਠ ਨਹੀਂ ਬੋਲਦੇ!

ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ ਖੀਵਾ

ਸਿੰਘੂ ਬਾਰਡਰ ਦੇ ਆਸ ਪਾਸ ਬਸਤੀਆਂ ਚ ਰਹਿਣ ਵਾਲੇ ਮਜ਼ਦੂਰਾਂ ਦੇ ਜਵਾਕ ਸਾਡਾ ਕਿਤਾਬਾਂ ਵਾਲਾ ਟੈਂਟ, 'ਠੇਕਾ ਕਿਤਾਬ' ਲਾਇਬ੍ਰੇਰੀ, ਵੇਖ ਕੇ ਭੱਜੇ ਆਏ "ਦੀਦੀ ਆਪ ਪੜ੍ਹਾਉਗੇ ਹਮੇਂ?" ਹੁੰਗਾਰਾ ਭਰਨ 'ਤੇ ਦੂਜੇ ਹੀ ਦਿਨ ਤੋਂ ਟੋਲੀਆਂ ਬੰਨ ਕੇ ਆਉਣ ਲੱਗ ਪਏ।

ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਮੁੱਢਲੀ ਜਾਣ ਪਹਿਚਾਣ ਦੇ ਦੌਰਾਨ ਜਦ ਮੈਂ ਓਹਨਾਂ ਦੇ ਨਾਮ ਪੁੱਛੇ ਤਾਂ ਇੰਜ ਲੱਗਿਆ ਜਿਵੇਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੇ ਬੱਚੇ ਹੋਣ। ਪੁੱਛੇ ਜਾਣ 'ਤੇ ਦੋ ਜਣਿਆਂ ਨੇ ਮੇਰੇ ਅੰਦਾਜ਼ੇ 'ਤੇ ਸਹੀ ਲਾਈ। ਇਜਾਜ, ਅਹਿਮਦ, ਮਾਲਾ, ਰੀਹਾਨ.....। ਇੱਕ ਜਵਾਕ ਬੋਲਿਆ "ਨਹੀਂ, ਹੱਮ ਤੋ ਹਿੰਦੂ ਹੈਂ..." ਨਾਲ ਵਾਲੇ ਬੱਚੇ ਬੋਲੇ "ਦੀਦੀ ਯੇ ਝੂਠ ਬੋਲਤਾ ਹੈ, ਹੱਮ ਲੋਗ ਮੁਸਲਿਮ ਹੀ ਹੈਂ, ਇਸਕੋ ਪੂਛੋ ਅਗਰ ਮੁਸਲਿਮ ਨਹੀਂ ਤੋ ਹੱਮ ਲੋਗ ਈਦ ਮਨਾਨੇ ਕਿਉਂ ਜਾਤੇ ਹੈਂ ਗਾਓਂ ਮੇਂ?" "ਦੀਦੀ ਇਸਕੋ ਨਾ ਸ਼ਰਮ ਆਤੀ ਹੈ ਬਤਾਨੇ ਮੇਂ, ਕਿ ਹੱਮ ਮੁਸਲਿਮ ਹੈਂ..." ਮੈਂ ਇਹ ਸੁਣਕੇ ਪ੍ਰੇਸ਼ਾਨ ਹੋ ਗਈ? ਮੈਨੂੰ ਸਮਝ ਨਾ ਆਵੇ ਕਿ ਕਿਉਂ ਇੱਕ ਧਰਮ ਨੂੰ ਮੰਨਣ ਲਈ ਛੋਟੇ ਛੋਟੇ ਜਵਾਕਾਂ ਨੂੰ ਸ਼ਰਮ ਮਹਿਸੂਸ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ। ਦੂਜਾ ਜਵਾਕ ਬੋਲਿਆ, "ਦੀਦੀ, ਹਮਨੇ ਟੀਵੀ ਮੇਂ ਦੇਖਾ ਮੁਸਲਿਮ ਕੋ ਨਾ ਭੀੜ ਮਾਰ ਦੇਤੀ ਹੈ, ਇਸ ਲੀਏ ਯੇ ਡਰਤਾ ਹੈ..." ਇਹ ਸਾਡੀਆਂ ਆਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਨਸਲਾਂ ਨੇ। ਇਹ ਭਾਰਤ ਦੀ ਗਰਕੀ ਹੋਈ ਤਸਵੀਰ ਦਾ ਸੱਚ ਹੈ।

ਇੱਕ ਨਿਆਣਾ ਭੋਲਾ ਮੂੰਹ ਬਣਾਕੇ ਬੋਲਿਆ, "ਦੀਦੀ ਆਪ ਲੋਗ ਤੋ ਸੜਕ ਪੇ ਰਹਿ ਕਰ ਭੀ ਇਤਨਾ ਅੱਛਾ ਖਾਨਾ ਖਾ ਰਹੇ ਹੋ। ਹਮੇਂ ਤੋ ਘਰ ਮੇਂ ਭੀ ਨਹੀਂ ਮਿਲਤਾ..." ਮੇਰੇ ਕੋਲ ਇਸ ਸੁਵਾਲ ਦਾ ਕੋਈ ਜਵਾਬ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਬੱਸ ਇੰਨਾਂ ਹੀ ਕਿਹਾ ਕਿ ਤੁਹਾਨੂੰ ਵੀ ਅੱਛਾ ਖਾਣਾ ਮਿਲੇ ਇਸ ਕਰਕੇ ਹੀ ਅਸੀਂ ਟਰਾਲੀਆਂ 'ਤੇ ਚੜ੍ਹਕੇ ਮੋਦੀ ਨਾਲ ਲੜਨ ਆਏ ਹਾਂ। ਜਵਾਕ ਖੁਸ਼ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

ਇੱਕ ਜਵਾਕੜੀ ਨੇ ਮੂੰਹ ਜਾ ਮਸੋਸ ਕੇ ਦੱਸਿਆ ਕਿ ਲਾਕਡਾਊਨ ਚ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਸਾਰੇ ਚੌਲ ਖਤਮ ਹੋ ਗਏ ਸਨ।ਦੂਜੀ ਦੱਸਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡ ਚਲ਼ੇ ਗਏ ਸੀ ਕਿਉਂਕਿ ਸਾਰੀਆਂ ਫੈਕਟਰੀਆਂ ਬੰਦ ਹੋ ਗਈਆਂ ਸਨ। 5 ਸਾਲਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਿਯਾ ਦੱਸਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹਦਾ ਅਧਾਰ ਕਾਰਡ ਪਿੰਡ ਹੀ ਰਹਿ ਗਿਆ। ਨਵਾਂ ਬਣਾਉਣ ਦੇ 500 ਰੁਪਏ ਮੰਗਦੇ ਹਨ ਪਰ ਓਹਨਾਂ ਕੋਲ ਐਨੇ ਪੈਸੇ ਹੈ ਨਹੀਂ ਇਸ ਕਰਕੇ ਉਸਨੂੰ ਇਸ ਸਾਲ ਸਕੂਲ ਦਾਖਲਾ ਨਹੀਂ ਮਿਲਿਆ।

ਬਿਸਲੇਰੀ ਦੀ ਬੋਤਲ ਵਿੱਚ ਦੁੱਧ ਪਾਕੇ, ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਮੋਰਚੇ 'ਚ ਲੱਗੇ ਲੰਗਰ ਵਿੱਚੋਂ ਪਵਾਇਆ ਸੀ, ਖੁਸ਼ਬੂ ਨਾਮ ਦੀ 8 ਸਾਲਾਂ ਦੀ ਕੁੜੀ ਆਪਣੀ ਇੱਕ ਸਾਲ ਦੀ ਭੈਣ ਦੇ ਮੂੰਹ ਨੂੰ ਲਾਉਂਦੀ ਹੋਈ ਬੋਲੀ, "ਦੀਦੀ ਅਗਰ ਸਰਦਾਰ ਲੋਗ ਚਲ਼ੇ ਗਏ ਤੋ ਸਭ ਸੂਨਾ ਹੋ ਜਾਏਗਾ।" ਗਾਉਣ ਦਾ ਸ਼ੌਂਕ ਰੱਖਦੇ ਪਵਨ ਕੁਮਾਰ ਬੋਲਿਆ, "ਦੀਦੀ, ਯੇ ਮੋਦੀ ਗਰੀਬ ਲੋਗੋਂ ਕੋ ਬੀ ਮਾਰਨਾ ਚਾਹਤਾ ਹੈ, ਇਸ ਲੀਏ ਹੱਮ ਬੀ ਇਸਕੋ ਪਸੰਦ ਨਹੀਂ ਕਰਤੇ ਔਰ ਹਮਨੇ ਬੀ ਨਾਅਰੇ ਲਗਾਨੇ ਸੀਖ ਲੀਏ ਹੈਂ।" ਇਹ ਗੱਲ ਚੱਲਦੇ ਚੱਲਦੇ ਇੱਕ ਮੁੰਡਿਆਂ ਦੀ ਟੋਲੀ ਨਾਅਰੇ ਲਾਉਂਦੀ ਲੰਘਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਜਵਾਕ ਜ਼ੋਰ ਦੀ ਜਵਾਬ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, "ਮੋਦੀ ਸਰਕਾਰ, ਮੁਰਦਾਬਾਦ!" "ਕਿਸਾਨ ਮਜ਼ਦੂਰ ਏਕਤਾ, ਜ਼ਿੰਦਾਬਾਦ!"

ਦੋ ਕੁ ਘੰਟਿਆਂ ਬਾਅਦ ਮੈਂ ਕਿਹਾ ਕਿ ਚਲੋ ਜਵਾਕੋ ਹੁਣ ਤੁਹਾਡੀ ਛੁੱਟੀ। ਜ਼ਿੱਦ ਜਿਹੀ ਨਾਲ ਕਹਿੰਦੇ ਕਿ ਗਾਣੇ ਸੁਣਾਕੇ ਜਾਵਾਂਗੇ। ਤਿੰਨ ਕੁੜੀਆਂ ਖੜੀਆਂ ਹੋਕੇ ਗਾਉਣ ਲੱਗੀਆਂ, "ਲੇ ਮਸ਼ਾਲੇਂ ਚਲ ਪੜ੍ਹੇ ਹੈਂ ਲੋਗ ਮੇਰੇ ਗਾਓਂ ਕੇ, ਅਬ ਅੰਧੇਰਾ ਜੀਤ ਲੇਂਗੇ ਲੋਗ ਮੇਰੇ ਗਾਓਂ ਕੇ...।" ਮੈਨੂੰ ਸਾਡਾ ਮੋਰਚਾ ਜਿੱਤਿਆ ਨਜ਼ਰ ਆਉਣ ਲੱਗਿਆ।

ਸੰਪਾਦਕੀ

ਪਾਰਲੀਮੈਂਟ ਵਿਚ ਖੇਤੀ ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਤੇ ਬਹਿਸ ਹੋਈ ਤਾਂ ਸਾਰੀਆਂ ਹੀ ਵਿਰੋਧੀ ਪਾਰਟੀਆਂ ਨੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀ ਹਮਾਇਤ ਕੀਤੀ। ਕਾਂਗਰਸ ਦੇ ਗ਼ੁਲਾਮ ਨਬੀ ਅਜ਼ਾਦ ਨੇ ਪਗੜੀ ਸੰਭਾਲ ਜੱਟਾ ਲਹਿਰ ਦਾ ਹਵਾਲਾ ਦੇ ਕੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਅੰਗਰੇਜ ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਵੀ ਖੇਤੀ ਕਾਨੂੰਨ ਵਾਪਸ ਲੈਣੇ ਪਏ ਸਨ ਅਤੇ ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਵੀ ਇਹੀ ਕਰਨਾ ਪਵੇਗਾ। ਰਾਹੁਲ ਗਾਂਧੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਸਰਕਾਰ ਹਮ ਦੋ ਹਮਾਰੇ ਦੋ ਭਾਵ ਅੰਬਾਨੀ ਅਦਾਨੀ ਮੋਦੀ ਅਮਿਤ ਸ਼ਾਹ ਦੀ ਜੁੰਡਲੀ ਚਲਾ ਰਹੀ ਹੈ। ਸਾਰੇ ਪੰਜਾਬੀ ਸਿਆਸਤਦਾਨਾਂ ਨੇ ਵੀ ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਲਾਅਣਤਾਂ ਪਾਈਆਂ। ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਜਿੱਤ ਹੈ ਕਿ ਸਾਰੀਆਂ ਵਿਰੋਧੀ ਸਿਆਸੀ ਪਾਰਟੀਆਂ ਇਕਸੁਰ ਹੋ ਕੇ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਹਮਾਇਤ ਵਿਚ ਹਨ। ਅੰਤ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਨਰਿੰਦਰ ਮੋਦੀ ਨੂੰ ਵੀ ਮੁੱਦੇ ਤੇ ਗੱਲ ਕਰਨੀ ਪਈ। ਪਰ ਉਸ ਤਕਰੀਰ ਵਿਚ ਵੀ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਅੰਦੋਲਨਕਾਰੀਆਂ ਨੂੰ ਪਰਜੀਵੀ ਜਿਹੇ ਭੱਦੇ ਲਕਬ ਦੇ ਕੇ ਭੰਡਿਆ। ਭਾਜਪਾ ਦੀ ਦੋਗਲੀ ਨੀਤੀ ਜਾਰੀ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਉਹ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੇ ਇਸ ਸ਼ਾਂਤਮਈ ਤਪ ਨੂੰ ਸਿਜਦਾ ਕਰਨ ਲਈ ਮਜਬੂਰ ਵੀ ਹਨ ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਹੀ ਫ਼ਿਕਰੇ ਵਿਚ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਬੁਰਾ ਭਲਾ ਵੀ ਕਹਿਣ ਲਗਦੇ ਹਨ।

ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਨੇ ਫਿਰ ਕਿਹਾ ਕਿ ਨਿੱਜੀ ਖੇਤਰ ਦਾ ਨੁਕਸਾਨ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ। ਹਰਿਆਣੇ ਦੇ ਮੁੱਖ ਮੰਤਰੀ ਮਨੋਹਰ ਲਾਲ ਖੱਟੜ ਨੇ ਬਿਆਨ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਕਿ ਨਿੱਜੀ ਅਤੇ ਸਰਕਾਰੀ ਸੰਪੰਤੀ ਦੇ ਨੁਕਸਾਨ ਦਾ ਹਰਜਾਨਾ ਅੰਦੋਲਨਕਾਰੀਆਂ ਤੋਂ ਵਸੂਲਿਆ ਜਾਵੇਗਾ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਲੋਕ ਸਭਾ ਵਿਚ ਜਦੋਂ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋਏ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀ ਯਾਦ ਵਿਚ ਦੋ ਮਿੰਟ ਦਾ ਮੌਨ ਰੱਖਿਆ ਗਿਆ ਤਾਂ ਭਾਜਪਾ ਨੇ ਇਸ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਹਰਿਆਣੇ ਦੇ ਇਕ ਮੰਤਰੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਇਹ ਕਿਸਾਨ ਜੇ ਘਰੇ ਵੀ ਰਹਿੰਦੇ ਤਾਂ ਵੀ ਮਰ ਜਾਂਦੇ। ਜਦ ਕਿ ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ ਆਪ ਹੀ ਸਰਕਾਰੀ ਸੰਪੰਤੀ ਕਾਰੋਪਰੇਟ ਘਰਾਣਿਆਂ ਨੂੰ ਵੇਚ ਰਹੀ ਹੈ। ਭਾਜਪਾ ਨੂੰ ਕਿਰਤੀ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਜਿੰਦਗੀਆਂ ਨਾਲੋਂ ਜਿਆਦਾ ਆਪਣੇ ਨਜ਼ਦੀਕੀ ਕਾਰਪੋਰੇਟ ਘਰਾਣਿਆਂ ਦੀ ਸੰਪੰਤੀ ਦਾ ਜਿਆਦਾ ਹੇਜ ਹੈ।

ਹਰਿਆਣਾ, ਯੂਪੀ, ਪੰਜਾਬ ਅਤੇ ਰਾਜਸਥਾਨ ਵਿਚ ਮਹਾਂਪੰਚਾਇਤਾਂ ਹੋ ਰਹੀਆਂ ਹਨ ਅਤੇ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਆਗੂਆਂ ਦੀਆਂ ਤਕਰੀਰਾਂ ਸੁਣਨ ਲੋਕ ਆਪਮੁਹਾਰੇ ਵਹੀਰਾਂ ਘੱਤ ਰਹੇ ਹਨ। ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਸਰਕਾਰ ਦੀ ਬਦ ਨੀਅਤ ਨੂੰ ਪਛਾਣ ਲਿਆ ਹੈ ਅਤੇ ਆਪਣੀ ਰੋਜ਼ੀ ਰੋਟੀ ਤੇ ਹੋ ਰਹੇ ਹਮਲੇ ਨਾਲ਼ ਨਜਿੱਠਣ ਲਈ ਡਟ ਗਏ ਹਨ। ਹਰ ਵਰਗ ਦੇ ਲੋਕ ਕਿਸਾਨ ਅੰਦੋਲਨ ਦੀ ਹਮਾਇਤ ਵਿਚ ਖੜੇ ਹਨ ਅਤੇ ਇਹ ਅੰਦੋਲਨ ਹੁਣ ਕੌਮੀ ਰੂਪ ਅਖਤਿਆਰ ਕਰ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ। ਕਿਸਾਨ ਅੰਦੋਲਨ ਦੀ ਚਿਣਗ ਮਹਾਰਾਸ਼ਟਰ, ਝਾਰਖੰਡ ਅਤੇ ਕਰਨਾਟਕਾ ਵਰਗੇ ਸੂਬਿਆਂ ਵਿਚ ਵੀ ਪਹੁੰਚ ਗਈ ਹੈ। ਇਥੋਂ ਦੇ ਕਿਸਾਨ ਦਿੱਲੀ ਤੋਂ ਦੂਰ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਭਾਵੇਂ ਦਿੱਲੀ ਮੋਰਚਿਆਂ ਤੇ ਘੱਟ ਗਿਣਤੀ ਵਿਚ ਹਨ ਪਰ ਆਪਣੇ ਆਪਣੇ ਸੂਬਿਆਂ ਵਿਚ ਰੋਸ ਮੁਜਾਹਰੇ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ।

ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਗਾਲ੍ਹਾਂ ਕਿਉਂ ਕੱਢਦੇ ਨੇ?

ਬਲਬੀਰ ਸਿੰਘ ਰਾਜੇਵਾਲ, ਤਕਰੀਰ ਵਿਚੋਂ

ਅੱਜ ਸਰਕਾਰ ਆਪਣੇ ਅਸੂਲਾਂ ਤੋਂ ਉੱਖੜ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀਆਂ ਦੇ ਕਿਰਦਾਰ ਦੀ ਗੱਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਮੂੰਹੋਂ ਇਹ ਕਿਹਾ ਹੋਇਆ ਹੈ, ਇੱਕ ਇੱਕ ਸ਼ਬਦ ਦੁਨੀਆ ਤੋਲਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸਨੂੰ ਘੋਖਦੀ ਹੈ। ਜੋ ਕੁਝ ਦਿਨ ਪਹਿਲਾਂ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਨੇ ਪਾਰਲੀਮੈਂਟ ਵਿੱਚ ਕਿਹਾ, ਜੋ ਕੁਝ ਸਾਨੂੰ ਕਿਹਾ ਅਤੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਬਾਰੇ ਬੋਲਿਆ, ਬਹੁਤੀ ਹੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਨਿੰਦਣਯੋਗ ਹੈ ਅਤੇ ਮੁਆਫ਼ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਕ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਸਾਨੂੰ ਗਾਲ੍ਹਾਂ ਕੱਢੀਆਂ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇੱਕ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆ ਹੈ ਜਿਸ ਦਾ ਮਤਲਬ ਹੈ, ਅਸੀਂ ਗੰਦ ਦੇ ਕੀੜੇ ਹਾਂ। ਕਿਸਾਨ ਗੰਦ ਦੇ ਕੀੜੇ ਨੇ, ਇਹ ਸ਼ਬਦ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਵਰਤਿਆ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਅੰਦੋਲਨ ਕਰਨਾ ਸਾਡਾ ਪੇਸ਼ਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਰਾਂ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਕਹਿ ਕੇ ਉਹ ਇਕ ਪਾਸੇ ਜਿਸਨੂੰ ਦੇਸ ਤਾਂ ਅੰਨਦਾਤਾ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਗੰਦਗੀ ਦਾ ਕੀੜਾ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸ਼ਬਦ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਪਾਰਲੀਮੈਂਟ ਵਿਚ ਬੋਲੇ ਹਨ। ਪਾਰਲੀਮੈਂਟ ਦੇਸ਼ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਚਾ ਸਦਨ ਹੈ।

ਜਿੱਥੇ ਇਕ ਇਕ ਸ਼ਬਦ ਤੋਲ ਕੇ ਬੋਲਣਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਦੇਸ਼ ਦਾ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸ਼ਬਦਾਵਲੀ ਵਰਤਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਮੈਂ ਸਮਝਦਾ ਹਾਂ ਕਿ ਉਹ ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਰਹਿਣ ਦੇ ਯੋਗ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਉਹ ਆਪਣੇ ਹੀ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਹੈ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ, ਜਿਹੜੇ ਅੰਨ ਪੈਦਾ ਕਰਕੇ ਸਾਰੇ ਦੇਸ਼ ਦਾ ਢਿੱਡ ਭਰਦੇ ਹਨ। ਓਹਨਾ ਨੂੰ ਹੀ ਇੰਨੀ ਭੱਦੀ ਸ਼ਬਦਾਵਲੀ ਵਰਤਣਾ। ਇਹ ਨਿੰਦਣਯੋਗ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਇਹ ਨਾ ਬਰਦਾਸ਼ਤ ਕਰਨ ਦੇ ਯੋਗ ਹੈ। ਅਸੀਂ ਇਸ ਦਾ ਸਮੇਂ ਸਿਰ ਜਵਾਬ ਜ਼ਰੂਰ ਦੇਵਾਂਗੇ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਹ ਵੀ ਸਾਬਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਰਕਾਰ ਘਬਰਾਈ ਕਿੰਨੀ ਹੋਈ ਹੈ ਅਤੇ ਮੋਦੀ ਉੱਖੜਿਆ ਕਿੰਨਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਉਹ ਇਖ਼ਲਾਕ ਤੋਂ ਨੀਵੇਂ ਪੱਧਰ ਤੇ ਆਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਸਾਨੂੰ ਸਮਝਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕੇ ਜਿੱਤ ਸਾਡੇ ਨੇੜੇ ਆ ਚੁੱਕੀ ਹੈ।

ਟੀਕਰੀ ਮੋਰਚੇ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ

ਗੁਰਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ ਬਰਾੜ

ਦਿੱਲੀ ਦੇ ਦੁਆਲੇ ਜੋ ਅੰਦੋਲਨ ਚੱਲ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਇਸਨੂੰ ਕੋਈ ਅਦੁੱਤੀ ਸ਼ਕਤੀ ਚਲਾ ਰਹੀ ਹੈ। ਅੱਜ ਤੋਂ ਕੋਈ 20–25 ਦਿਨ ਪਹਿਲਾਂ ਸਿੰਘੂ ਤੇ ਟਿੱਕਰੀ ਬਾਡਰ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਅਜਿਹਾ ਹੀ ਮੰਨਣਾ ਸੀ। ਇਸ ਵਾਰ 26 ਜਨਵਰੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਦੀ ਫੇਰੀ ਦੌਰਾਨ ਇਹ ਮਾਨਤਾ ਹੋਰ ਦ੍ਰਿੜ ਹੋ ਗਈ ਕਿ ਸੱਚੀ ਹੀ ਕੁਦਰਤ ਮਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਇਹਨਾਂ ਜੇਠੇ ਪੁੱਤਰਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬੁੱਕਲ ਵਿਚ ਸਮੋਂ ਰੱਖਿਆ ਹੈ। ਵੈਸੇ ਵੀ ਕੁਦਰਤ ਅਤੇ ਕਿਰਸਾਨੀ ਇਕ ਦੂਜੇ ਨਾਲ ਐਨੇ ਰਚੇ–ਮਿਚੇ ਹਨ ਕਿ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਵੱਖਰਾ ਕਰਨਾ ਅਸੰਭਵ ਹੈ। ਕਿਰਸਾਨੀ ਧਰਤੀ ਦੀ ਕੁੱਖ ਚੋਂ ਬੀਜ ਦੇ ਪੁੰਗਰਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਫਸਲ ਦੇ ਪੱਕਣ ਤੱਕ ਇਕ ਮਿੱਥੀ ਹੋਈ ਕੁਦਰਤੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜਰਦੀ ਹੈ। ਕਿਸਾਨਾਂ ਦਾ ਇਹ ਯੁੱਧ ਭਲਾ ਕੁਦਰਤੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਤੋਂ ਦੂਰ ਕਿਵੇਂ ਹੋ ਸਕਦਾ ਸੀ। ਆਪਣੇ ਰਵਾਇਤੀ ਢੰਗ ਅਨੁਸਾਰ ਹੀ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੇ ਪਹਿਲਾਂ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡਾਂ ਦੀਆਂ ਫਿਰਨੀਆਂ ਤੋਂ ਹਾਈਵੇ ਤੱਕ ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਪਨੀਰੀ ਤਿਆਰ ਕੀਤੀ। ਫਿਰ ਦਿੱਲੀ ਨੂੰ ਜਾਂਦੀਆਂ ਵੱਡੀਆਂ ਸੜਕਾਂ ਕੱਦੂ ਕਰਕੇ ਇਹ ਪਨੀਰੀ ਦਿੱਲੀ ਦੀ ਨਿਆਂਈਂ 'ਚ ਜਾ ਲਾਈ। ਫਸਲ ਦੀ ਨਿਗਰਾਨੀ ਲਈ ਨਿਰੰਤਰ ਵਾਰੀ ਸਿਰ ਪਿੰਡ ਤੋਂ ਟਿਕਰੀ ਅਤੇ ਸਿੰਘੂ ਵਾਲੇ ਖੇਤ ਗੇੜਾ ਵੱਜਦਾ ਰਿਹਾ। ਫਸਲ ਲਹਿਰਾ ਰਹੀ ਸੀ, ਬਹੁਤ ਝਾੜ ਦੀ ਉਮੀਦ ਸੀ, ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੇ ਚਿਹਰਿਆਂ ਦਾ ਜਾਹੋ–ਜਹਾਲ ਵੱਖਰਾ ਸੀ। ਫੇਰ ਅਚਾਨਕ ਇਕ ਦਿਨ ਸਰਕਾਰੀ ਤੰਤਰ, ਏਜੰਸੀਆਂ, ਗੋਦੀ ਮੀਡੀਆ, ਆਰ. ਐਸ. ਐਸ ਅਤੇ ਕੁਝ ਹੋਰ ਭੇਤੀਆਂ ਦਾ ਟਿੱਡੀ ਦਲ ਖੌਰੂ ਪਾਉਣ ਆ ਚੜ੍ਹਿਆ। ਪਰ ਸ਼ਾਮ ਹੁੰਦੇ–ਹੁੰਦੇ ਹੋਸ਼ ਦੇ ਪੀਪੇ ਖੜਕਣ ਲੱਗੇ, ਅਗਲੀ ਸਵੇਰ ਟਿੱਡੀ ਦਲ ਭੱਜਦਾ ਨਜ਼ਰ ਆਇਆ। ਪਰ ਟਿੱਡੀ ਦਲ ਨੇ ਉਸ ਇਕ ਦਿਨ ਵਿੱਚ ਹੀ ਫਸਲ ਦਾ ਚੋਖਾ ਨੁਕਸਾਨ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਚਿਹਰੇ ਨਿਰਾਸ਼ ਹੋਣ ਲੱਗੇ, ਜਾਹੋ–ਜਲਾਲ ਉਡਣ ਲੱਗੇ, ਗੋਦੀ ਮੀਡੀਆ ਤਾੜੀ ਮਾਰ ਹੱਸਣ ਲੱਗਿਆ ਤਾਂ ਇਸ ਕੁਮਲਾ ਰਹੀ ਫਸਲ ਨੂੰ ਗਾਜੀਪੁਰ ਬਾਡਰ ਤੇ ਬੈਠੇ ਇਕ ਬਜ਼ੁਰਗ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਦੇ ਪਾਣੀ ਨਾਲ ਸਿੰਜਿਆ। ਅੱਖਾਂ ਦੇ ਮੋਘੇ 'ਚੋਂ ਪਹਿਲੀ ਬੂੰਦ ਕੀ ਨਿਕਲੀ ਕਿ ਹਰ ਘਰ 'ਚੋਂ ਹਾਅ ਦੇ ਨਾਅਰੇ ਲੱਗੇ, ਥਾਲੀਆਂ 'ਚ ਪਈ ਰੋਟੀ ਛੱਡ ਰਾਤੋ–ਰਾਤ ਹੀ ਦਿੱਲੀ ਵੱਲ ਨੂੰ ਕੂਚ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਏ। ਅਗਲੇ ਦਿਨ ਦੇ ਸੂਰਜ ਦੀਆਂ ਪਹਿਲੀਆਂ ਕਿਰਨਾਂ ਨਾਲ ਹੀ ਫਸਲ ਫਿਰ ਲਹਿਰਾਉਣ ਲੱਗੀ, ਜਾਹੋ–ਜਲਾਲ ਮੁੜ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੇ ਚਿਹਰਿਆਂ ਦੀ ਰੌਣਕ ਬਣਿਆ।

ਕੁਦਰਤੀ ਇਸੇ ਦਿਨ ਹੀ ਟਿੱਕਰੀ ਆਉਣ ਦਾ ਸਬੱਬ ਬਣਿਆ, ਇਕੱਠ ਵੱਧ ਗਿਆ ਸੀ, ਪੰਡਾਲ ਸੱਜ ਰਿਹਾ ਸੀ, ਨਾਅਰੇ ਲੱਗ ਰਹੇ ਸਨ। ਰੋਜ਼ ਦੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਤੜਕੇ ਸਾਰ ਹੀ ਲਾਂਬਾਂ ਪਿੰਡ ਵਾਲਾ ਰਵਿੰਦਰ ਆਪਣੇ ਨੰਗੇ ਧੜ ਨਾਲ ਸਵੇਰ ਦੇ ਮਾਰਚ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਕਰ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਰਵਿੰਦਰ ਨੇ ਬੀਤੇ ਦੋ ਮਹੀਨਿਆਂ ਤੋਂ ਕੜਕਦੀ ਠੰਡ ਵਿਚ ਵੀ ਆਪਣੇ ਧੜ ਤੇ ਕੱਪੜਾ ਨਹੀਂ ਪਾਇਆ, ਹਿੱਕ ਤੇ "ਕਿਸਾਨੀ ਹੀ ਧਰਮ ਹੈ" ਲਿਖਾ ਰੱਖਿਆ ਹੈ। ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਦਿਨ ਦੀ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਏਸ ਸ਼ੇਰ ਦੀ ਦਹਾੜ ਨਾਲ ਹੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਬਾਕੀ ਹਰਿਆਣੇ ਆਲਿਆਂ ਨੇ ਵੀ ਬੜੇ ਚਾਅ ਨਾਲ ਦੱਸਿਆ ਕਿ 'ਇਬ ਹਰਿਆਣਾ ਪੰਜਾਬ ਸੇ ਆਗੇ ਹੈ।' ਇਹ ਸੱਚ ਵੀ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਪੰਜਾਬ ਨੇ ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਦਾ ਪਿੜ ਬੰਨਿਆ ਉੱਥੇ ਯੂ.ਪੀ. ਅਤੇ ਹਰਿਆਣੇ ਨੇ 26 ਜਨਵਰੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਇਸਨੂੰ ਮੁੜ ਸੁਰਜੀਤ ਕੀਤਾ। ਹਰਿਆਣੇ ਆਲਿਆਂ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਮਲਾਲ ਜ਼ਰੂਰ ਸੀ ਕਿ ਜਾਟ ਅੰਦੋਲਨ ਵੇਲੇ ਸਾਨੂੰ ਲੰਗਰ ਲਾਉਣਾ ਨਹੀਂ ਸੀ ਆਉਂਦਾ, ਇਸ ਮੋਰਚੇ 'ਤੇ ਸਰਦਾਰਾਂ ਨੇ ਸਾਨੂੰ ਲੰਗਰ ਲਾਉਣਾ ਸਿਖਾ ਦਿੱਤਾ ਤੇ ਹੁਣ ਹਰਿਆਣਾ ਲੰਗਰ ਲਾਉਣਾ ਕਦੇ ਨਹੀਂ ਭੁੱਲੇਗਾ।

ਪਿੰਡ ਆਧਨੀਆਂ ਦੀ ਟਰਾਲੀ ਤੇ ਜਿਆਦਾ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਗੱਲਾਂ ਹੋਈਆਂ, ਅਖੇ ਟਕੈਤ ਦੇ ਹੰਝੂਆਂ ਨੇ ਕੱਲੀ ਯੂ.ਪੀ. ਨਹੀਂ ਹਲੂਣੀ ਸਗੋਂ ਹਰਿਆਣੇ, ਪੰਜਾਬ ਨੂੰ ਵੀ ਧੁਰ ਅੰਦਰ ਤੱਕ ਵੰਗਾਰਿਆ, ਬਾਕੀ ਟਕੈਤ ਦੇ ਵੀ ਵੱਸ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਉਹ ਦਿਨ ਹੀ ਐਸਾ ਸੀ, ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਕੋਈ ਟਰਾਲੀ ਐਸੀ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਜਿਸਤੇ ਕਿਸੇ ਬਜ਼ੁਰਗ ਦੀ ਅੱਖ ਸਿੱਲੀ ਨਾ ਹੋਈ ਹੋਵੇ। ਅੱਖਾਂ ਦੀ ਇਹ ਵੱਤ ਬੇਕਾਰ ਨਹੀਂ ਜਾਵੇਗੀ, ਸੰਘਰਸ਼ ਲੰਬਾ ਚੱਲੇਗਾ, ਦਿਉਣ ਖੇੜੇ ਆਲਾ ਜਨਕ ਕਹਿੰਦਾ ਵੀ ਹੁਣ ਘਰ ਤਾਂ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦੇ, ਜਾਵਾਂਗੇ ਕੋਈ ਨਤੀਜਾ ਲੈ ਕੇ ਹੀ। ਆ ਰਹੀ ਗਰਮੀ ਨਾਲ ਨਜਿੱਠਣ ਲਈ ਉਹ ਆਵਦੀ ਟਰਾਲੀ ਤੇ ਕੂਲਰ ਲਾਉਣ ਦੀ ਜੁਗਤ ਘੜ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਗੱਗੜ ਵਾਲੇ ਬਾਬਿਆਂ ਨੇ ਗੁੱਝੀ ਗੱਲ ਦੱਸੀ ਕਿ ਮੋਦੀ ਜੱਟ ਨਸਲ ਨੂੰ ਸਮਝ ਹੀ ਨਹੀਂ ਪਾਇਆ, ਉਹਨੂੰ ਕੋਈ ਦੱਸਣ ਵਾਲਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਜੱਟ, ਜਾਟ ਤੇ ਝੋਟੇ ਨੂੰ ਜੇ ਮਾਰਨਾ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਉਹਨੂੰ ਖੂਹ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਵੱਲ ਖਿੱਚੋ ਤਾਂ ਫਿਰ ਉਹ ਆਵਦੀ ਅੜੀ ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਨਾਲ ਆਪ ਖੂਹ 'ਚ ਡਿੱਗਦਾ ਅਤੇ ਮੋਦੀ ਕਮਲਾ ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਖਿੱਚ ਕੇ ਖੂਹ 'ਚ ਸਿੱਟਣ ਨੂੰ ਫਿਰਦਾ। ਬਾਪੂ ਕਹਿਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਸੀ ਕਿ ਸਰਕਾਰ ਜਿੰਨੇ ਵੱਧ ਪੰਗੇ ਲਵੇਗੀ, ਸੰਘਰਸ਼ ਉਨ੍ਹਾਂ ਹੀ ਵੱਧ ਤਿੱਖਾ ਤੇ ਤੇਜ਼ ਹੋਵੇਗਾ। ਜਿਵੇਂ ਹੀ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਕੋਝੀਆਂ ਚਾਲਾਂ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤੀਆਂ, ਵੇਖੋ ਪੰਜਾਬ, ਹਰਿਆਣਾ, ਯੂ.ਪੀ., ਰਾਜਸਥਾਨ ਦੇ ਪਿੰਡ–ਪਿੰਡ ਅਨਾਊਂਸਮੈਂਟਾਂ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਈਆਂ, ਮਤੇ ਪੈਣੇ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਏ, ਦਿੱਲੀ ਵੱਲ ਨੂੰ ਫੇਰ ਕਾਫਲੇ ਵੱਧ ਗਏ।

ਤੁਰਦੇ–ਤੁਰਦੇ ਟਿੱਕਰੀ ਸਟੇਜ਼ ਕੋਲ ਪਹੁੰਚੇ, ਇਕੱਠ ਪਹਿਲਾਂ ਨਾਲੋਂ ਬਹੁਤ ਵੱਧ ਸੀ। ਸਟੇਜ਼ ਤੋਂ ਟਿੱਕਰੀ ਦੇ ਇਲਾਕੇ ਬਹਾਦਰਗੜ੍ਹ ਦੀ ਇਕ ਮੁਟਿਆਰ ਕਿਰਤੀ ਬੋਲ ਰਹੀ ਸੀ ਕਿ "ਗੋਦੀ ਮੀਡੀਆ "ਸਥਾਨਕ ਲੋਕਾਂ" ਦਾ ਨਾਂ ਲੈ ਕੇ ਮੋਰਚੇ ਵਿਰੁੱਧ ਭੰਡੀ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਅਸੀਂ ਹਾਂ ਇੱਥੋਂ ਦੇ ਸਥਾਨਕ ਲੋਕ, ਸਾਡੇ ਕੋਲ ਬੇਸ਼ੱਕ ਸਾਧਨ ਸੀਮਤ ਹਨ ਪਰ ਤੁਸੀਂ ਬੀਤੇ ਦੋ ਮਹੀਨਿਆਂ ਵਿਚ ਸਾਡੇ ਦਿਲਾਂ ਨੂੰ ਜਿੱਤਿਆ ਹੈ ਅਸੀਂ ਜਿੰਨੇ ਜੋਗੇ ਵੀ ਹਾਂ, ਥੋਡੀ ਹਮਾਇਤ 'ਤੇ ਹਾਂ।" ਇੱਥੇ ਹੀ ਇਕ ਨੌਜਵਾਨ ਮਿਲਿਆ ਜੋ 26 ਜਨਵਰੀ ਵਾਲੇ ਦਿਨ ਜੋਸ਼ ਤੇ ਸਸੋਪੰਜ਼ ਵਿਚ ਲਾਲ ਕਿਲੇ ਤੇ ਗਿਆ ਸੀ। ਹੁਣ ਪਛਤਾ ਰਿਹਾ ਸੀ ਕਿ ਅਸੀਂ ਵਹਾਅ ਵਿਚ ਉੱਥੇ ਚਲੇ ਗਏ। ਉੱਥੇ ਜਾਣ ਨਾਲ ਮੋਰਚੇ ਨੂੰ ਨੁਕਸਾਨ ਹੋਇਆ, ਸਾਨੂੰ ਆਗੂਆਂ ਦੀ ਗੱਲ ਮੰਨਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਸੀ।

ਹੁਣ ਅੰਦਲੋਨ ਇਕ ਅਹਿਮ ਪੜਾਅ ਵਿਚ ਦਾਖਲ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ, ਪਿੜ ਮੁੜ ਬੱਝ ਗਿਆ ਹੈ, ਸਿਖਰ ਵੱਲ ਨੂੰ ਵੱਧ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਕਿਸਾਨਾਂ, ਖਾਸ ਕਰਕੇ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਧਿਆਨ ਰੱਖਣਾ ਪਵੇਗਾ ਕਿ ਇਹ ਮੋਰਚਾ ਕਿਰਸਾਨੀ, ਕਿਰਤੀ ਅਤੇ ਹਰ ਆਮ ਬੰਦੇ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਪਲੇਟਫਾਰਮ ਨੂੰ ਸਿੱਖੀ ਦੇ ਮਸਲਿਆਂ ਨਾਲ ਰਲ–ਗੱਡ ਕਰਨ ਨਾਲ ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਆਧਾਰ ਨੂੰ ਖੋਰਾ ਲੱਗੇਗਾ। ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਨਾਲ ਜੁੜੀ ਹਰ ਧਿਰ ਨੂੰ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਆਧਾਰ ਦਾ ਵੱਧ ਤੋਂ ਵੱਧ ਫੈਲਾਅ ਕਰਨ ਲਈ ਯਤਨ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਮੋਰਚਾ ਨਾ ਸਿੱਖਾਂ ਦਾ ਹੈ, ਨਾ ਕਾਮਰੇਡਾਂ ਦਾ ਹੈ, ਇਹ ਮੋਰਚਾ ਬਜ਼ਾਰ ਅਤੇ ਸਰਕਾਰ ਹੱਥੋਂ ਪਿਸ ਰਹੇ ਆਮ ਇਨਸਾਨ ਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਮੋਰਚਾ ਲੋਕਤੰਤਰ ਦੀ ਬਹਾਲੀ ਲਈ ਲੜ ਰਹੇ ਆਜਾਦ ਖਿਆਲ ਦਾ ਹੈ। ਜੇ ਅਜੇ ਵੀ ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਨਾ ਸਮਝ ਸਕੇ ਅਤੇ ਆਵਦੇ ਸੀਮਿਤ ਦਾਇਰਿਆਂ 'ਚੋਂ ਇਸ ਮੋਰਚੇ ਨੂੰ ਤੱਕਦੇ ਰਹੇ ਤਾਂ ਇਤਿਹਾਸ ਕਦੇ ਵੀ ਮਾਫ ਨਹੀਂ ਕਰੇਗਾ। ਜੋ ਘਰਾਂ ਵਿਚ ਬੈਠੇ ਨੇ, ਮੋਰਚਾ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਉਡੀਕ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਗੋਦੀ ਮੀਡੀਆ ਦੀਆਂ ਅਫਵਾਹਾਂ ਤੋਂ ਬਚੋ, ਮੋਰਚਾ ਜਾਹੋ–ਜਲਾਲ 'ਤੇ ਹੈ।

ਇਸ ਵਾਰ ਫੌਜਾਂ ਜਿੱਤ ਕੇ ਅੰਤ ਨੂੰ ਹਾਰਨੀਆਂ ਨਹੀਂ ਚਾਹੀਦੀਆਂ, ਬਾਬਿਆਂ ਨੇ ਜਵਾਨੀ ਨੂੰ ਜੂਝਣ ਦੀ ਗੁੜਤੀ ਦੇ ਦਿੱਤੀ ਹੈ। ਸੰਘਰਸ਼ ਹੁਣ ਸਬਰ ਤੇ ਸਿਦਕ ਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ, ਪੰਜਾਬੀ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬੀਅਤ ਦੀ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਇਨਸਾਨੀਅਤ ਦੀ ਵੀ ਉਮਰ ਵੱਧ ਗਈ ਹੈ। ਇਸ ਅੰਦੋਲਨ ਨੂੰ ਜਾਗ ਲਾਉਣ ਵਾਲੇ, ਸਿਖਰ ਵੱਲ ਲੈ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਹਰ ਬੰਦੇ ਦੇ ਜੋਸ਼, ਜਨੂੰਨ ਅਤੇ ਜਜ਼ਬੇ ਨੂੰ ਪ੍ਰਣਾਮ।

ਪੰਜਾਬ ਜਿਉਂਦਾ ਹੈ

ਰਸ਼ਮੀਤ ਕੌਰ

ਸੰਵਿਧਾਨ ਦਿਵਸ ਤੇ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨੇ ਜੋ ਜੰਗ ਸਰਕਾਰ ਦੇ ਕਾਲੇ ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਖਿਲਾਫ਼ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤੀ, ਕਾਫੀ ਸ਼ਲਾਘਾਯੋਗ ਹੈ। ਕਿਹਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਸੀ ਕਿ ਸਿਰਫ ਬਜ਼ੁਰਗ ਇਸ ਅੰਦੋਲਨ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਹਨ, ਨੋਜਵਾਨਾਂ ਨੇ ਅੱਗੇ ਆ ਕੇ ਇਹ ਸਾਬਿਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਸ਼ਹੀਦ-ਏ-ਆਜ਼ਮ ਸਰਦਾਰ ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਸਾਡੇ ਵਿੱਚ ਅੱਜ ਵੀ ਜਿਉਂਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸਿਨੇ ਚੋਂ ਸਰਕਾਰ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਜੋ ਚੀਸ ਉੱਠੀ ਹੌਲੀ-ਹੌਲੀ ਸਾਰੇ ਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਫੈਲ ਗਈ ਅਤੇ ਦੁਨੀਆ ਭਰ ਦੇ ਕਿਸਾਨ ਸਰਕਾਰ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਆਣ ਖੜ੍ਹੇ ਹੋ ਗਏ।ਇਸ ਅੰਦੋਲਨ ਨੇ ਅੱਗੇ ਆਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਪੀੜ੍ਹੀਆਂ ਨੂੰ ਸੇਧ ਦੇ ਦਿੱਤੀ ਹੈ ਕਿ ਆਪਣੇ ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਕਿੰਝ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕਰਨੀ ਹੈ। ਜਿਹੜੀ ਨੋਜਵਾਨੀ ਨੂੰ ਵੇਹਲੜ ਤੇ ਲੀਹੋਂ ਲਹਿ ਗਈ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ ਉਹ ਅੱਜ ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਮੂਹਰੇ ਲਾਈ ਫਿਰਦੀ ਹੈ। ਜੋ ਮੇਰੇ ਵਰਗੇ ਸਰਕਾਰੀ ਮਸਲਿਆਂ ਨੂੰ ਵੇਖ ਆਖ ਛੱਡਦੇ ਸੀ ਕਿ ਅਸੀਂ ਕੀ ਲੈਣਾ ਜੋ ਹੁੰਦਾ ਹੋਈ ਜਾਵੇ, ਅੱਜ ਇੰਨੇ ਕੁ ਜਾਗਰੂਕ ਹੋ ਗਏ ਆ ਕਿ ਇਸ ਤਾਨਾਸ਼ਾਹ ਸਰਕਾਰ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕਰ ਸਕੀਏ। ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਅਸੀਂ ਜਿੱਤਣਾ ਹੈ ਜਾਂ ਨਹੀਂ ਪਰ ਇਸ ਸਰਕਾਰ ਦਾ ਅਸਲੀ ਚਿਹਰਾ ਅਸੀਂ ਸਾਰੀ ਦੁਨੀਆਂ ਨੂੰ ਵਖਾ ਦਿੱਤਾ। ਕਦੇ ਆਤੰਕਵਾਦੀ, ਕਦੇ ਖਾਲਿਸਤਾਨੀ ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਕੀ ਕੀ ਆਖਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਪਰ ਫਿਰ ਵੀ ਸ਼ਾਂਤਮਈ ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰਦੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਜਿੰਨਾ ਸਬਰ ਹੋਰ ਕਿਸ ਕੋਲ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ? ਸਾਡੇ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚ ਤਾਂ ਸਰਦਾਰ ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਵੀ ਅੱਤਵਾਦੀ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ ਹੋਇਆ ਹੈ ਫਿਰ ਅਸੀਂ ਤਾਂ ਇੱਕ ਆਮ ਇਨਸਾਨ ਹਾਂ। ਡਿਜੀਟਲ ਇੰਡੀਆ ਦਾ ਰੋਲਾ ਪਾਉਂਣ ਵਾਲੇ ਮੋਦੀ ਜੀ ਨੂੰ ਨੋਜਵਾਨਾਂ ਨੇ ਟਵਿਟਰ ਤੇ ਆ ਕੇ ਦੱਸ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਡਿਜੀਟਲ ਕਿਹਨੂੰ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਅੰਦੋਲਨ ਨੇ ਦੱਸ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਹਿੰਦੂ,ਮੁਸਲਿਮ,ਸਿੱਖ,ਈਸਾਈ ਦੇ ਏਕੇ ਦੀ ਜੋ ਗੱਲ ਸਾਡੇ ਗੁਰੂਆਂ ਨੇ ਸਿਖਾਈ ਉਹ ਅੱਜ ਵੀ ਹਕੀਕਤ ਹੈ। ਧਰਨਿਆਂ ਤੇ ਬੈਠੇ ਕਿਸਾਨ ਅੱਜ ਸਰਦਾਰ ਭਗਤ ਸਿੰਘ, ਅਕਾਲੀ ਫੂਲਾ ਸਿੰਘ, ਨਵਾਬ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਆਦਿ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹ ਰਹੇ ਨੇ, ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦਾ ਲੰਗਰ ਵਰਤ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਨੋਜਵਾਨੀ ਸਹੀ ਰਾਹੇ ਤੁਰ ਪਈ ਹੈ, ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਮਜ਼ਬੂਤ ਹੋ ਗਈ ਹੈ, ਸਰਕਾਰ ਦਾ ਅਸਲੀ ਰੰਗ ਦਿਖ ਗਿਆ ਹੈ, ਹੁਣ ਭਾਵੇਂ ਅਸੀਂ ਜਿੱਤਿਏ ਜਾਂ ਨਈ ਪਰ ਅਸੀਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਕੁਝ ਜਿੱਤ ਲਿਆ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਵਾਪਿਸ ਪਰਤ ਗਿਆ ਹੈ।

ਰਾਜਨੀਤਕ ਲੜਾਈ

ਨਵਜੋਤ ਸਿੰਘ

ਹਰ ਰੋਜ਼ ਦੀ ਸਵੇਰੇ ਕਿਸਾਨ-ਮਜ਼ਦੂਰ ਏਕਤਾ ਜ਼ਿੰਦਾਬਾਦ, ਮੋਦੀ ਸਰਕਾਰ ਮੁਰਦਾਬਾਦ, ਖੇਤੀ ਵਿਰੋਧੀ ਕਾਲੇ - ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰੋ, ਅੰਦਾਨੀ-ਅੰਬਾਨੀ ਮੁਰਦਾਬਾਦ 'ਤੇ ਕਿਰਤੀ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਏਕਾ ਜ਼ਿੰਦਾਬਾਦ ਨਾਲ ਸ਼ੁਰੂ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਵਰਤਾਰਾ ਸਾਰਾ ਦਿਨ ਵਾਪਰਦਾ ਹੈ। ਸਭ ਤੋ ਰੌਚਿਕ ਗੱਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਇਹਨਾਂ ਨਾਆਰਿਆ ਨੇ ਜੱਥੇ ਬੱਚਿਆਂ ਤੇ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀ ਬੋਲਣ ਦੀ ਜ਼ੱਕ ਖੋਲੀ ਹੈ, ਉਥੇ ਚੇਤਨਾਂ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਵੀ ਹੋਇਆ। ਇਸ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਹੁਣ ਗੋਦੀ ਮੀਡੀਆ ਜਦੋ ਵੀ ਨੋਜ਼ਵਾਨ ਮੁੰਡੇ- ਕੁੜੀਆਂ ਨੂੰ ਸਵਾਲ ਪੁਛਦੇ ਨੇ ਖੇਤੀ ਵਿਰੋਧੀ ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਦੇ ਨਾ ਦੱਸੋ, ਉਹ ਪਟੱਕ ਦੇਣੇ ਦੱਸਦੇ ਨੇ ਤੇ ਭਵਿੱਖ ਵਿੱਚ ਹੋਣ ਵਾਲੇ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਨੁਕਸਾਨ ਵੀ ਦੱਸਦੇ ਨੇ।

ਇਸ ਜਨ ਅੰਦੋਲਨ ਨੇ ਇਹ ਵੀ ਸੱਚ ਸਾਬਿਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਇਕੱਠ ਲੋਹੇ ਦੀ ਲੱਠ ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਸ ਸਰਕਾਰ ਕੋਲ ਕਿਰਤੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਕਾਨੂੰਨ ਬਣਾਉਣ, ਲੁੱਟਣ ਤੇ ਕੁੱਟਣ, ਧਰਮਾਂ, ਜਾਤਾਂ, ਪਾਤਾਂ, ਰੰਗਾਂ, ਨਸਲਾਂ ਤੇ ਲੜਾਉਣ ਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਕਾਰਪੋਰੇਟ ਘਰਾਣਿਆਂ ਦੇ ਢਿੱਡ ਭਰਣ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਹੋਰ ਕੋਈ ਕੰਮ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਹੁਣ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਕਿਰਤੀ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਇਹ ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ 'ਤੇ ਆਰ.ਐਸ.ਐਸ ਦੇ ਇਸ ਮਨਸੂਬੇ ਨੂੰ ਵੀ ਇਸ ਜਨ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰ ਚੁੱਕੇ ਅੰਦੋਲਨ 'ਚ ਇਹ ਪੱਤਾ ਖੇਡਣ ਤੋ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਕਾਮਯਾਬ ਕੀਤਾ। ਇਹ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਦੇਸ਼ ਵਿਆਪੀ ਏਕਤਾ ਨੇ ਦੂਜੀਆਂ ਲੋਟੂ ਪਾਰਟੀਆਂ ਦੇ ਆਗੂਆਂ ਦੇ ਮੱਥੇ 'ਤੇ ਵੀ ਤਰੇਲੀਆ ਲਿਆਉਣੀਆਂ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੱਤੀਆ ਕਿਉਂਕਿ ਉਹ ਵੀ ਅੰਦਰ-ਖਾਤੇ ਨਾਲ ਮਿਲੇ ਹੋਏ ਸੀ। ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਚਿੱਟੇ ਦਿਨ ਵਾਂਗ ਪਤਾ ਲੱਗ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।

ਇਹ ਖੇਤੀ ਵਿਰੋਧੀ ਕਾਨੂੰਨਾਂ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰਵਾਕੇ ਕਿ ਇਸ ਨੂੰ ਇਕੱਲੀ ਨਿਰੋਲ ਆਰਥਿਕ ਜਿੱਤ ਵਾਲੀ ਲੜਾਈ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ ਰਹਿਣ ਦੇਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਨੂੰ ਕਿਰਤੀ ਜਮਾਤ ਦੀ ਰਾਜਨਾਤਿਕ ਲੜਾਈ ਦੇ ਰੂਪ 'ਚ ਬਦਲਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਅਗਲਾ ਹੰਭਲਾ ਸਮਾਜਿਕ ਤਬਦੀਲੀ ਲਈ ਮਾਰਿਆ ਜਾਵੇ ਤੇ ਹਰ ਲਈ ਸਿਹਤ, ਵਿਦਿਆ ਇਕਸਾਰ ਲਾਜ਼ਮੀ ਤੇ ਫਰੀ, ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਹਰ ਇਕ ਬਾਲਗ/ਮਰਦ ਇਸਤਰੀ ਲਈ ਰੁਜ਼ਗਾਰ ਆਦਿ ਦੀ ਗਰੰਟੀ ਕਰਦੇ ਕਾਨੂੰਨ ਬਣਾਏ ਜਾਣ।

ਜਮਹੂਰੀ ਕਿਸਾਨ ਸਭਾ

ਸੰਗੀਤ ਤੂਰ

ਸਥਾਪਨਾ: 2001(ਕੁਲ ਹਿੰਦ ਕਿਸਾਨ ਸਭਾ ਤੋਂ ਵੱਖ ਹੋਕੇ)
ਆਗੂ: ਸਤਨਾਮ ਸਿੰਘ ਅਜਨਾਲਾ (ਸੂਬਾ ਪ੍ਰਧਾਨ), ਕੁਲਵੰਤ ਸਿੰਘ ਸੰਧੂ (ਜਨਰਲ ਸਕੱਤਰ), ਪਰਗਟ ਜਾਮਾਰਾਏ (ਪ੍ਰੈੱਸ ਸਕੱਤਰ)
ਮੈਂਬਰ: 50, 000
ਇਲਾਕਾ: ਪੰਜਾਬ ਦੇ 19 ਜਿਲ੍ਹੇ

ਸਥਾਪਨਾ ਵੇਲੇ ਇਸ ਦਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਕੰਮ ਜੋ ਕੇ ਜਮਾਤੀ ਭਾਈਵਾਲ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਸਰਕਾਰ ਦੀਆਂ ਕਿਸਾਨ ਵਿਰੋਧੀ ਨੀਤੀਆਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਨਾ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਤੋੜ ਕੇ ਨਵੀਆਂ ਨੀਤੀਆਂ ਬਣਾਉਣ ਦੇ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ ਪਾਉਣਾ ਸੀ। ਉਸ ਵਕਤ ਸਾਥੀ ਨਾਜਰ ਸਿੰਘ ਜੀ ਪ੍ਰਧਾਨ ਬਣੇ ਸਨ। ਉਸ ਵਕਤ ਚਾਰ ਨੀਤੀਆਂ ਬਣਾਈਆਂ ਗਈਆਂ ਸਨ। ਕਿਸਾਨ ਦੀ ਆਰਥਿਕ ਹਾਲਾਤ ਨੂੰ ਬਿਹਤਰ ਕਰਨਾ, ਪਬਲਿਕ ਡਿਸਟਰੀਬਿਊਸ਼ਨ ਨੂੰ ਮਜਬੂਤ ਕਰਨਾ, ਅੰਨ ਸੁਰੱਖਿਆ ਕਰਨਾ ਅਤੇ ਕਿਸਾਨੀ, ਜਵਾਨੀ, ਪਾਣੀ ਅਤੇ ਵਾਤਾਵਰਨ ਦੀ ਸੰਭਾਲ ਕਰਨੀ ਤੈਅ ਕੀਤੀਆਂ ਗਈਆਂ।

ਕਿਸਾਨ ਦੀ ਆਰਥਿਕ ਹਾਲਤ ਸੁਧਾਰਨ ਲਈ, ਲਾਹੇਵੰਦ ਭਾਅ ਦਵਾਉਣੇ ਅਤੇ ਸਵਾਮੀਨਾਥਨ ਰਿਪੋਰਟ ਦੇ ਮੁਤਾਬਕ ਸੀ2 ਦੇ ਫਾਰਮੂਲਾ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ 50% ਵਾਧਾ ਕਰਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਭਾਅ ਬਣਾਉਣੇ ਅਤੇ ਫ਼ਸਲਾਂ ਦਾ ਸਰਕਾਰੀ ਬੀਮਾ ਦੇਣਾ ਹੈ। ਸਰਕਾਰੀ ਬੀਮਾ ਦੇਣ ਦੇ ਲਈ ਜ਼ਿਲ੍ਹੇ, ਤਹਿਸੀਲ ਜਾਂ ਪਿੰਡ ਨੂੰ ਇਕਾਈ ਬਣਾ ਕੇ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਖੇਤ ਨੂੰ ਇਕਾਈ ਬਣਾ ਕੇ ਮੁੱਲ ਤੈਅ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਖੇਤ ਦੇ ਹਿਸਾਬ ਨਾਲ਼ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਮੁਆਵਜ਼ਾ ਦਿੱਤਾ ਜਾਵੇ। ਇਸ ਦੇ ਵਿੱਚ ਹੀ ਦੇਸੀ ਅਤੇ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਕੰਪਨੀ ਦੀ ਖੇਤੀ ਸੈਕਟਰ ਦੇ ਵਿੱਚ ਪਾਬੰਦੀ ਲਗਾਉਣੀ ਹੈ। ਵਾਤਾਵਰਨ ਨੂੰ ਦੇਖਦੇ ਹੋਏ ਖਾਧਾਂ ਅਤੇ ਬੀਜਾਂ ਤੇ ਸਬਸਿਡੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਕਰਨੀ, ਜਿਸ ਨਾਲ਼ ਕਿਸਾਨ ਠੀਕ ਤਰ੍ਹਾਂ ਖਰੀਦ ਸਕੇ। PDS ਵਿਚ ਸਰਕਾਰ ਆਪ ਜ਼ਰੂਰੀ ਵਸਤਾਂ ਦੀ ਖ਼ਰੀਦ ਕਰੇ ਅਤੇ ਗ਼ਰੀਬਾਂ ਨੂੰ ਮੁਫ਼ਤ ਦੇਵੇ। ਅੰਨ ਸੁਰੱਖਿਆ ਦੇ ਵਿਚ ਅਸੀਂ ਜਦੋ ਦੂਜੇ ਦੇਸ਼ਾਂ ਨਾਲ਼ ਲੈਣ ਦੇਣ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਲੋੜ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਰੱਖਿਆ ਜਾਵੇ। ਮੌਜੂਦਾ ਹਾਲਾਤਾਂ ਦੇ ਵਿਚ ਕਿਸਾਨ ਮਾਰੂ ਨੀਤੀਆਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਨਾ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਜਮਹੂਰੀ ਕਿਸਾਨ ਸਭਾ ਦੇ ਸੰਵਿਧਾਨ ਦੇ ਵਿਚ ਸੀ।

ਇਹ ਜਥੇਬੰਦੀ ਪਹਿਲੀਆਂ ਕਤਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ। ਇਹ ਤਿੰਨ ਸਾਲ ਦੀ ਮੈਂਬਰਸ਼ਿਪ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਤਿੰਨ ਸਾਲਾਂ ਬਾਅਦ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਇੱਕ ਇਜਲਾਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜੋ ਕੇ ਅਲੱਗ ਅਲੱਗ ਥਾਵਾਂ ਤੇ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪੰਜ ਰੁਪਏ ਦੀ ਮੈਂਬਰਸ਼ਿੱਪ ਹੈ ਜੋ ਹਰ ਇਜਲਾਸ ਬਾਅਦ ਨਵਿਆਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ 2020 ਵਿੱਚ ਇਜਲਾਸ ਹੋਇਆ ਹੈ ਉਸ ਵਿੱਚ ਅਜਨਾਲਾ ਜੀ ਪ੍ਰਧਾਨ ਬਣੇ । ਸੰਧੂ ਜੀ ਜਨਰਲ ਸਕੱਤਰ ਚੁਣੇ ਗਏ। ਜਥੇਬੰਦਕ ਢਾਂਚਾ ਪਹਿਲਾਂ ਵਾਂਗ ਹੀ ਹੈ ਪਿੰਡ, ਤਹਿਸੀਲ ਜ਼ਿਲ੍ਹਾ ਅਤੇ ਸੂਬਾ ਪੱਧਰ ਦਾ ਹੈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਇਜਲਾਸ ਵਿਚ ਜ਼ਿਲ੍ਹੇ ਅਤੇ ਸੂਬੇ ਦੇ ਮੈਂਬਰ ਹੁੰਦੇ ਭਾਗ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। 2007 ਦੇ ਇਜਲਾਸ ਵਿਚ ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਜਗ੍ਹਾ ਨੂੰ ਯਕੀਨੀ ਬਣਾਇਆ ਗਿਆ ਸੀ। ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਇਹ ਜਥੇਬੰਦੀ ਔਰਤਾਂ ਨੂੰ ਕਿਸਾਨ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਵਾਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਖੁਦਕੁਸ਼ੀ

ਜਗਦੀਪ ਬਿਰੁਵਾਲਾ, ਸਿਰਸਾ

ਪਤਰਕਾਰਿਤਾ ਵਿਚ ਇੱਕ ਗਜਬ ਦੀ ਚੀਜ਼ ਹੁੰਦੀ ਹੈ "ਸਟੋਰੀ ਕਰਨਾ" ਜਾਂ "ਗਰਾਊਂਡ ਰਿਅਲਿਟੀ" ਤੇ ਕੁੱਛ ਲੇਖ ਲਿਖਣਾ ਅਤੇ ਪੜ੍ਹਨ ਵਾਲੇ ਨੂੰ ਲੂੰ ਕੰਡੇ ਖੜੇ ਹੋਣ ਤੱਕ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਕਰਵਾ ਕੇ ਹਲਾਤਾਂ ਤੋਂ ਜਾਣੂ ਕਰਵਾਉਣਾ। ਦੇਸ਼ ਅੰਦਰ ਨਿੱਕੇ ਨਿੱਕੇ ਮਸਲਿਆਂ ਤੇ ਰਿਪੋਰਟਾਂ ਹੋਈਆਂ ਨੇਂ, ਬਹੁਤ ਕੁੱਛ ਲਿਖਿਆ ਗਿਆ, ਅੰਤਰਰਾਸਟਰੀ ਪੱਧਰ ਤੱਕ ਓਹਨਾਂ ਮਸਲਿਆਂ ਨੂੰ ਲਿਜਾਇਆ ਗਿਆ। ਪਰ, ਹੁਣ ਗੱਲ ਮਾਲਵੇ ਦੇ ਉਸ ਖਿੱਤੇ ਦੀ ਕਰਨੀ ਬਣਦੀ ਐ ਜਿਥੋਂ ਦੇ ਮਿਹਨਤੀ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸ਼ਰੀਰ ਦਾ ਚੰਮ ਉਧੇੜਨ ਤਕ ਵਾਲਿਆਂ ਮਿਹਨਤਾਂ ਕਰਕੇ ਮਾਲਵੇ ਦੇ ਟਿੱਬਿਆਂ ਨੂੰ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਉਪਜਾਊ ਧਰਤੀ ਬਣਾਇਆ।

ਨਰਮਾ ਪੱਟੀ (ਕੌਟਨ ਬੈਲਟ), ਜਿਸ ਵਿਚ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਮਾਨਸਾ, ਬਠਿੰਡਾ, ਸ਼੍ਰੀ ਮੁਕਤਸਰ ਸਾਹਿਬ; ਹਰਿਆਣੇ ਦੇ ਸਰਸਾ, ਫਤਿਹਾਬਾਦ ਅਤੇ ਰਾਜਸਥਾਨ ਦੇ ਸ਼੍ਰੀ ਗੰਗਾਨਗਰ, ਹਨੂੰਮਾਨਗੜ੍ਹ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹਨ। ਇਥੋਂ ਦੇ ਹਲਾਤਾਂ ਦੀ ਰਿਪੋਰਟਿੰਗ ਬਹੁਤ ਘੱਟ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਅਜਿਹਾ ਲੇਖ ਪੜ੍ਹਨ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਜਿਸ ਵਿਚ ਇਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਹਲਾਤਾਂ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੋਵੇ। ਬਠਿੰਡਾ ਦੇ ਦਮਦਮਾ ਸਾਹਿਬ ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ ਤਹਿਸੀਲ ਦੇ ਕਈ ਪਿੰਡ ਅਜਿਹੇ ਹਨ ਜਿੱਥੇ ਇਕ ਇਕ ਘਰ ਅੰਦਰ ਦੋ-ਦੋ ਮੌਤਾਂ ਕੈਂਸਰ ਨਾਲ ਹੋਈਆਂ ਹਨ। ਲੋਕ ਡਰਦੇ ਮਾਰੇ ਕੈਂਸਰ ਦਾ ਨਾਮ ਤਕ ਨਹੀਂ ਲੈਂਦੇ।

ਜਦੋਂ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਕੈਂਸਰ ਵਾਲੇ ਦੀ ਮੌਤ ਵਾਰੇ ਪੁੱਛਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਤਾਂ ਉਹ ਇਹ ਨਹੀਂ ਕਹਿੰਦਾ ਕਿ ਉਸਨੂੰ ਕੈਂਸਰ ਸੀ, ਸਗੋਂ ਇਹ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸਨੂੰ "ਦੂਜਾ ਰੋਗ" ਸੀ। ਨਰਮੇ ਦੀ ਫ਼ਸਲ ਤੇ 7-10 ਸਪਰੇਹਾਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀ ਖੁਦਕੁਸ਼ੀ ਦੇ ਆਂਕੜੇ ਕੋਈ ਸਹੀ ਨਹੀਂ ਦਸ ਸਕਦਾ। ਤੁਸੀਂ ਆਪਣੇ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਵੇਖੋ ਪਿਛਲੇ 10 ਸਾਲ ਦਾ, ਹਰੇਕ ਪਿੰਡ ਅੰਦਰ ਸਾਲਾਨਾ 3-5 ਖੁਦਕੁਸ਼ੀਆਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਦੋਂ ਕੋਈ ਸਪਰੇਅ ਪੀ ਕੇ ਮਰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਖਬਰ ਥਾਣੇ ਤਕ ਨਹੀਂ ਜਾਣ ਦਿੰਦੇ ਲੋਕ, ਕਿ ਐਵੇਂ ਪੁਲਸ ਚੱਕਰਾਂ ਚ ਪਾਉ, ਬਿਨਾ ਨਹਾਏ ਸਿੱਧੇ ਅੰਤਮ ਸੰਸਕਾਰ ਹੁੰਦੇ ਵੇਖੇ ਨੇ ਲੋਕਾਂ (ਕਿਸਾਨਾਂ) ਦੇ। ਕੀ ਇਹ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਨਹੀਂ ਹੈ? ਕੀ ਜਮੀਰ ਨੂੰ ਹਲੂਣਾ ਦੇਣ ਵਾਲੀ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਹੈ ਕਿ 15000 ਕਿਲੋਮੀਟਰ ਇਲਾਕਾ ਦੁਨੀਆਂ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਵਧ ਖੁਦਕੁਸ਼ੀ ਦਰ ਵਾਲੇ ਇਲਾਕਿਆਂ ਵਿਚੋਂ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸਦੀ ਖਬਰ ਤਕ ਨਹੀਂ?

ਮੈਂ ਦਾਅਵੇ ਨਾਲ ਕਹਿ ਸਕਦਾਂ ਕਿ ਪਿਛਲੇ 10 ਸਾਲਾਂ ਤੋਂ ਜੇਕਰ ਲੂੰ ਕੰਡੇ ਖੜ੍ਹੇ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਮੁੱਦਾ ਸੀ ਤਾਂ ਮਾਲਵੇ ਦੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੀ ਖੁਦਕੁਸ਼ੀ ਅਤੇ ਕੈਂਸਰ ਵਰਗੀਆਂ ਨਾ ਮੁਰਾਦ ਬਿਮਾਰੀਆਂ ਸੀ। ਮਨੁੱਖੀ ਇਤਿਹਾਸ ਲਈ ਇਸਤੋਂ ਸ਼ਰਮਸ਼ਾਰ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਗੱਲ ਕੋਈ ਹੋਰ ਨਹੀ ਹੋ ਸਕਦੀ ਕਿ ਇੱਕ ਪਰਵਾਰ ਅੰਦਰ 3 ਜਣਿਆਂ ਦੀ ਮੌਤ ਕੈਂਸਰ ਨਾਲ਼ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪਤਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਸਾਨੂੰ ਜਾਂ ਸਾਡੇ ਪਰਵਾਰਾਂ ਨੂੰ ਕੈਂਸਰ ਕਿਉਂ ਹੋਇਆ। ਫ਼ਸਲਾਂ, ਖਾਸ ਕਰਕੇ ਨਰਮੇ ਕਪਾਹ ਦੀਆਂ ਫ਼ਸਲਾਂ ਤੇ ਹੋਣ ਵਾਲੀਆਂ ਸਪਰੇਹਾਂ ਨੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਸ਼ਰੀਰਕ ਦੇ ਨਾਲ਼ ਨਾਲ਼ ਦਿਮਾਗੀ ਤੌਰ ਤੇ ਇੰਨਾ ਕੁ ਹਲਾਕ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਕਿ ਮਰਨ ਵਾਲੇ ਅਤੇ ਉਸਦੇ ਆਸ ਪਾਸ ਵਾਲੇ ਇਸ ਬਾਰੇ ਚਰਚਾ ਤਾਂ ਕੀ ਕਰਨ, ਓਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪਤਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਇਹ ਹੋ ਕੀ ਰਿਹਾ।

ਕਾਇਨਾਤ ਅੰਦਰ ਕੋਈ ਘਟਨਾ ਅਜਿਹੀ ਨਹੀਂ ਘਟਦੀ ਹੋਣੀ, ਜਿੱਥੇ ਕੋਈ ਇੰਨਾ ਹਨੇਰੇ ਵਿਚ ਰਹਿ ਕੇ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੋਵੇ। ਉਸ ਨਿਜਾਮ ਉਪਰ ਸਵਾਲ ਕਰਨਾ ਬਣਦਾ ਹੈ ਜੋ ਕੈਂਸਰ ਦੀ ਮੌਤ ਨੂੰ, ਗ਼ਰੀਬੀ ਤੋਂ ਮੌਤ ਨੂੰ, ਸਿਸਟਮ(ਢਾਂਚੇ) ਵੱਲੋਂ ਪੈਦਾ ਕੀਤੇ ਹਲ਼ਾਤਾਂ ਵੱਲੋਂ ਦਿੱਤੀ ਮੌਤ ਨੂੰ ਅੱਖੋ ਪਰੋਖੇ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ।

Scan this for PDF

We are thankful to Ramneek Mohan, Khushveer Singh and Suchetna Singh for editing transcription and translation services.

14 ਫਰਵਰੀ ਨੂੰ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੇ ਦੇਸ਼ ਭਰ ਵਿੱਚ ਕੈਂਡਲ ਮਾਰਚ ਕਰਕੇ ਪੁਲਵਾਮਾ ਦੇ ਸ਼ਹੀਦਾਂ ਨੂੰ ਦਿੱਤੀ ਸ਼ਰਧਾਂਜਲੀ; ਟਿਕਰੀ ਮੋਰਚੇ 'ਚ ਕੀਤੇ ਕੈਂਡਲ ਮਾਰਚ ਦਾ ਇੱਕ ਦ੍ਰਿਸ਼।
ਫੋਟੋ: ਜਸਕਰਨ ਸਿੰਘ

ਚੌਂਕੀਦਾਰ

ਡਾ. ਗੁਰਸੇਵਕ ਲੰਬੀ

ਸੋਚਿਆ ਸੀ ਤੂੰ ਕਰੇਂਗਾ ਰਾਖੀ
ਰਹਿਣੀ ਨਈ ਕੋਈ ਚਿੰਤਾ ਬਾਕੀ
ਪਰ ਤੂੰ ਤਾਲਾ ਤੋੜ ਕੇ ਬਹਿ ਗਿਓਂ
ਸਭ ਕੁਝ ਸਾਡਾ ਲੁੱਟ ਕੇ ਲੈ ਗਿਓਂ
ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਕਰ 'ਤੀ ਫੀਤਾ ਫੀਤਾ
ਚੌਕੀਦਾਰਾ ! ਇਹ ਕੀ ਕੀਤਾ ?

ਕਿਹਾ ਤੂੰ ਮੇਰੇ ਹੱਕ 'ਚ ਆ-ਜੋ
ਮੈਨੂੰ ਚੌਂਕੀਦਾਰ ਬਣਾ ਦੋ
ਗੱਲਾਂ ਤੇਰੀਆਂ ਦੇ ਵਿੱਚ ਆ-ਗੇ
ਹੱਕ 'ਚ ਤੇਰੇ ਗੂਠੇ ਲਾ-ਗੇ
ਦੁੱਧ ਭੁਲੇਖੇ ਜ਼ਹਿਰ ਜਾ ਪੀਤਾ
ਚੌਂਕੀਦਾਰਾ ! ਇਹ ਕੀ ਕੀਤਾ ?

ਧਰਮ ਦਾ ਗਲ ਵਿੱਚ ਸਾਫਾ ਪਾ ਕੇ
ਰੱਖਦਾਂ ਏਂ ਤੂੰ ਉਂਗਲ ਲਾ ਕੇ
ਸਭ ਨੂੰ ਇੱਕੋ ਰੰਗ 'ਚ ਰੰਗੇ
ਤੂੰ ਕਰਵਾਉਨਾ ਰਹਿਨਾ ਦੰਗੇ
ਲੜ-ਪੇ ਕੱਲੂ ਸਲੀਮ ਤੇ ਜੀਤਾ
ਚੌਂਕੀਦਾਰਾ ! ਇਹ ਕੀ ਕੀਤਾ ?

ਹੁਣ ਤੂੰ ਸਾਥੋਂ ਟਲਿਆ ਫਿਰਦਾਂ
ਤੂੰ ਚੋਰਾਂ ਸੰਗ ਰਲਿਆ ਫਿਰਦਾਂ
ਸਾਰਾ ਪਿੰਡ ਹੀ ਵੇਚਣ ਲੱਗਾ
ਧੋਖਾ ਕੀਤਾ ਓਏ! ਤੂੰ ਠੱਗਾ ਸਲੀਮ
ਪਿੰਡ ਦਾ ਹਰ ਇਨਸਾਨ ਵੇਚਤਾ
ਤੂੰ ਮਜ਼ਦੂਰ, ਕਿਸਾਨ ਵੇਚਤਾ
ਫੱਟ ਇਹ ਜਾਣਾ ਨਹੀਓਂ ਸੀਤਾ
ਚੌਂਕੀਦਾਰਾ ! ਇਹ ਕੀ ਕੀਤਾ?
ਚੌਕੀਦਾਰਾ ! ਮਾੜਾ ਕੀਤਾ

ਆਮ ਹਮਾਇਤ ਨੂੰ ਤੋੜਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼

ਜਸਦੀਪ ਸਿੰਘ

ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਕਿਸਾਨ ਅੰਦੋਲਨ ਦੇ ਹਮਾਇਤੀਆਂ ਨੂੰ ਡਰਾਉਣ ਦੀ ਮੁਹਿੰਮ ਜਾਰੀ ਰੱਖਦਿਆਂ 21 ਸਾਲਾ ਵਾਤਾਵਰਨ ਕਾਰਕੁਨ ਦਿਸ਼ਾ ਰਵੀ ਨੂੰ ਦਿੱਲੀ ਪੁਲੀਸ ਦੀ ਸਾਈਬਰ ਸੈੱਲ ਦੀ ਟੀਮ ਨੇ ਬੰਗਲੌਰ ਤੋਂ ਗ੍ਰਿਫਤਾਰ ਕਰ ਲਿਆ। ਇਸ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਵਿਸ਼ਵ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਗ੍ਰੇਟਾ ਥੁਨਬਰਗ ਤੇ ਵੀ ਕੇਸ ਦਰਜ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਸੀ।

ਗ੍ਰੇਟਾ ਨੇ ਇਕ ਦਸਤਾਵੇਜ਼ ਸਾਂਝਾ ਕੀਤਾ ਸੀ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਹਮਾਇਤ ਕਰਨ ਦੇ ਤਰੀਕੇ ਦੱਸੇ ਗਏ ਸਨ। ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਇਸ ਨੂੰ ਕੌਮਾਂਤਰੀ ਸਾਜਿਸ਼ ਗਰਦਾਨਦਿਆਂ ਦਸਤਾਵੇਜ਼ ਬਨਾਉਣ ਵਾਲਿਆਂ ਤੇ ਕਾਨੂੰਨੀ ਕਾਰਵਾਈ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੱਤੀ।

ਪਿਛਲੇ ਹਫ਼ਤੇ ਆਜ਼ਾਦ ਖ਼ਬਰੀ ਅਦਾਰੇ 'ਨਿਊਜ਼ ਕਲਿਕ' ਦੇ ਦਫਤਰ ਅਤੇ ਮਾਲਕਾਂ ਦੇ ਘਰਾਂ ਤੇ ਇਨਫੋਰਸਮੈਂਟ ਡਿਪਾਰਟਮੈਂਟ ਨੇ ਛਾਪਾ ਮਾਰਿਆ। ਇਹ ਅਦਾਰਾ ਦਲੇਰੀ ਨਾਲ਼ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੀਆਂ ਖ਼ਬਰਾਂ ਅਤੇ ਦਿੱਲੀ ਪੁਲਿਸ ਦੀ ਲੋਕ ਵਿਰੋਧੀ ਕਾਰਗੁਜ਼ਾਰੀ ਬਾਰੇ ਲਿਖ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਇਹ ਛਾਪਾ ਚਾਰ ਦਿਨ ਚੱਲਿਆ।

ਦਿੱਲੀ ਪੁਲਿਸ ਅੰਦੋਲਨਕਾਰੀਆਂ ਤੇ ਤਾਂ ਕੇਸ ਪਾ ਹੀ ਰਹੀ ਹੈ ਪਰ ਹਮਾਇਤ ਵਿੱਚ ਆਵਾਜ਼ ਚੁੱਕਣ ਵਾਲੇ ਪੱਤਰਕਾਰਾਂ ਅਤੇ ਆਮ ਸ਼ਹਿਰੀਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਕਾਨੂੰਨੀ ਕੇਸਾਂ ਵਿੱਚ ਫਸਾ ਕੇ ਡਰਾ ਧਮਕਾ ਰਹੀ ਹੈ। ਭਾਜਪਾ ਸਰਕਾਰ ਬੁਖਲਾਹਟ ਵਿੱਚ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਉੱਠੀ ਹਰ ਆਵਾਜ਼ ਨੂੰ ਕੁਚਲਣ ਵਿੱਚ ਲੱਗੀ ਹੋਈ ਹੈ ਤਾਂ ਕਿ ਸ਼ਹਿਰੀ ਹਮਾਇਤ ਨੂੰ ਰੋਕਿਆ ਜਾ ਸਕੇ। ਸਰਕਾਰ ਨੂੰ ਡਰ ਹੈ ਕਿ ਅੰਦੋਲਨ ਪਿੰਡਾਂ ਦਾ ਜਾਂ ਕਿਸਾਨੀ ਦਾ ਨਾ ਰਹਿ ਕੇ ਕਦੇ ਸ਼ਹਿਰੀ ਖੇਤਰ ਵਿਚਲੇ ਮੁਲਾਜ਼ਮਾਂ ਕਿਰਤੀਆਂ ਦਾ ਨਾ ਬਣ ਜਾਵੇ। ਪਰ ਲੋਕ ਸਰਕਾਰ ਦੇ ਹਰ ਹਮਲੇ ਦਾ ਜਵਾਬ ਆਪਣੀ ਤਾਕਤ ਅਤੇ ਏਕੇ ਦਾ ਮੁਜ਼ਾਹਰਾ ਕਰ ਕੇ ਦੇ ਰਹੇ ਹਨ।

ਮਹਿਕਦੀ ਰੁੱਤ ਦਾ ਹਿਸਾਬ

ਤਰਨਦੀਪ ਬਿਲਾਸਪੁਰ

"ਮੈਂ ਉਸਤੋਂ ਮਹਿਕਦੀ ਰੁੱਤ ਦਾ ਹਿਸਾਬ ਮੰਗ ਬੈਠਾ
ਉਹ ਮਲਕੜੇ ਮੇਰੀ ਝੋਲੀ 'ਚ ਭਰ ਗਿਆ ਪੱਥਰ।"

ਸ਼ਾਇਰ ਰਾਜਿੰਦਰਜੀਤ ਦੇ ਸ਼ਬਦ ਸਾਡੇ ਸਮਿਆਂ ਦੀ ਕਥਾ ਨੇ , ਹਾਕਮ ਨੂੰ ਹੁਣ ਪੂਰੇ ਸਾਲਮ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਹਰ ਮੋੜ ਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨੀ, ਖਾਲਿਸਤਾਨੀ ਤੇ ਨਕਸਲੀ ਦਿਖਦੇ ਹਨ। ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਹੁਣ ਪਰਜੀਵੀ ਹੋ ਗਏ ਹਨ। ਤਾਂ ਫਿਰ ਸਾਲਮ ਭਾਰਤ ਵੀ 37% ਵੋਟਾਂ ਲੈ ਕੇ ਕਿ ਤੀਸਰੀ ਡਿਵੀਜਨ 'ਚ ਪਾਸ ਹੋਈ ਭਾਰਤੀ ਜਨਤਾ ਪਾਰਟੀ ਤੇ ਉਸਦੇ ਮਨੀਟਰ ਨਰਿੰਦਰ ਮੋਦੀ ਨੂੰ ਲੋਕਤੰਤਰ ਨੂੰ ਲੱਗੀ ਜੋਕ ਕਹਿਕੇ ਸੰਬੋਧਿਤ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਐਸੀ ਜੋਕ ਜੋ ਲੋਕਾਈ ਦੇ ਲਹੂ ਦੀਆਂ ਘੁੱਟਾਂ ਭਰ ਭਰ ਦੈਂਤ ਬਣ ਰਹੀ ਹੈ। ਅਜਿਹਾ ਦੈਂਤ ਜਿਸਦਾ ਏਜੰਡਾ ਇੱਕ ਸੂਤਰੀ ਹੈ, ਕਾਰਪੋਰੇਟ ਦੀ ਮੁਨਾਫੇ ਦੀ ਮਸ਼ੀਨ ਬਣਨਾ ਤੇ ਉਸ ਦੀ ਮਾਇਆ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਸਿਆਸੀ ਦਮਨ ਚੱਕਰ ਚਲਾਉਣਾ। ਰਾਮ ਮੰਦਰ, ਧਾਰਾ 370, ਸਿਟੀਜਨ ਬਿੱਲ ਸਭ ਇਸ ਦੈਂਤ ਦੇ ਛਲਾਵੇ ਮਾਤਰ ਨੇ ਤਾਂ ਕਿ 37% ਵਾਲੀ ਉਸਦੀ ਖੇਡ ਚੱਲਦੀ ਰਹੇ।

ਹੁਣ ਜਦੋਂ ਮੀਡੀਆ ਦਾ ਵੱਡਾ ਹਿੱਸਾ ਸੱਤਾ ਦੀ ਗੋਦੀ ਵਿੱਚ ਸਜਿਆ ਬੈਠਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ #ਟਵਿੱਟਰ ਵਰਗੇ ਸਾਧਨ ਜਨ ਊਰਜਾ ਦੇ ਟੂਲ ਨੇ, ਇੱਥੇ ਵੀ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਸੁਰੱਖਿਆ ਵਰਗੇ ਸ਼ਬਦ ਹੁਣ ਇਹਨਾਂ ਤਕਨੀਕੀ ਟੂਲਾਂ (ਸੰਦਾਂ) ਨੂੰ ਬੇਅਸਰ ਕਰਨ ਲਈ ਐਨੇ ਸਰਗਰਮ ਸ਼ਬਦ ਬਣ ਗਏ ਨੇ ਤਾਂ ਸਾਨੂੰ ਸਮਝ ਲੈਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸੂਚਨਾ ਤੇ ਜਨ ਸੰਵਾਦ ਨੂੰ ਇਵੇਂ ਕੰਟਰੋਲ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਇਹ ਇੱਕ ਇਸ਼ਾਰਾ ਹੈ ਕਿ ਭਾਰਤ ਦੂਸਰੀ ਪਹਿਲਾ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਵੱਡ ਅਕਾਰੀ ਸਰਕਾਰੀ ਐਮਰਜੈਂਸੀ ਲਈ ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਹਾਲਾਂਕਿ ਬਹੁਤ ਵੱਡੀ ਤਦਾਦ ਵਿੱਚ ਸੱਤਾ 'ਚ ਬੈਠੇ ਲੋਕ ਉਸ ਐਮਰਜੈਂਸੀ ਨੂੰ ਹੰਢਾਵੇ ਰੂਪ 'ਚ ਜਾਣਦੇ ਹਨ। ਪਰ ਉਹ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਨਲਾਇਕ ਵਿਦਿਆਰਥੀ ਦੀ ਤਰਾਂ ਭੁੱਲ ਗਏ ਹਨ ਕਿ ਐਮਰਜੈਂਸੀ ਦਾ ਹਸ਼ਰ ਕੀ ਹੋਇਆ ਸੀ ਜਾਂ ਮੁਨਾਫੇ ਤੇ ਸੱਤਾ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਉਸ ਗਧੇ ਵਾਂਗ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ, ਜਿਸਨੂੰ ਮਾਲਕ ਦੋ ਖੋਪੇ ਲਾ ਕੇ ਸਿੱਧੀ ਸੜਕ ਹੀ ਦਿਖਾਉਂਦਾ ਹੈ,ਜਿਸਤੇ ਉਸਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਤੋਰ ਕਿ ਸਿਰਫ ਕਿਰਾਇਆ ਢੋਣਾ ਹੈ।

ਇਸ ਮੌਕੇ ਸਵਾਲ ਉਹਨਾਂ ਤੇ ਵੀ ਹੈ ਜੋ ਇਸ ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਵੱਡੇ ਸਿਆਸੀ ਘੋਲ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾ ਦੇ ਪਰਦਰਸ਼ਨੀ ਮੈਚਾਂ 'ਚ ਇੱਕ ਦੂਸਰੇ ਦੇ ਸਿਆਸੀ ਤੇ ਜਮਾਤੀ ਵਿਰੋਧੀਆਂ ਦੀ ਪਿੱਠ ਲੱਗਣ ਤੇ ਉੱਚੀ ਹੇਕ 'ਚ ਮਰਸੀਏ ਗਾਉਂਦੇ ਹਨ ਉਹ ਸਭ ਪੀੜੇ ਜਾਣਗੇ, ਜੇ ਇਕੱਠੇ ਨਾ ਹੋਏ। ਲੜਾਈ ਉਹਨੀਂ ਲੰਬੀ, ਪੀੜਾਦਾਇਕ ਤੇ ਔਖੀ ਹੈ। ਜਿਹਨੇਂ ਅਸੀਂ ਦੌਫਾੜ ਹਾਂ। ਸਟੇਟ ਦੇ ਇਹ ਪੈਂਤੜੇ ਸਦੀਵੀ ਫਿੱਟ ਬੈਠੇ ਹਨ ਕਿ ਲੜਦਿਆਂ ਨੂੰ ਭਿੜਨ ਦਿਉ ਤੇ ਆਪਸੀ ਘੋਲ ਖੂਨੀ ਕਰ ਦਿਉ ਤਾਂ ਕਿ ਸਟੇਟ ਅਮਰਵੇਲ ਵਾਂਗ ਸਭ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਲਾਵੇ ਵਿੱਚ ਘੁੱਟ ਲਵੇ। ਸੋ ਆਪੋ ਆਪਣੇ ਟੈਗ ਲਾਹ ਕਿ ਸੰਤ ਰਾਮ ਉਦਾਸੀ ਦੇ ਸ਼ਬਦ ਹੀ ਸਾਡਾ ਅਸਲ ਨਿਤਾਰਾ ਨੇ ਜਦੋਂ ਸਾਡਾ ਸਿਰਮੌਰ ਕਵੀ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ

"ਕਿਵੇਂ ਸਾਡੀ ਨਿਭਦੀ ਏ ਨਿੱਕਿਆਂ ਪੜਾਵਾਂ ਨਾਲ,
ਮੰਜ਼ਲਾਂ ਦੇ ਅਸੀਂ ਹਾਂ ਵਰੇ।
ਮੰਜ਼ਲਾਂ 'ਤੇ ਖੜੀ ਸਾਨੂੰ ਜਿੰਦਗੀ ਉਡੀਕਦੀ ਏ,
ਤੁਰੇ ਬਿਨਾ ਕੰਮ ਨਾ ਸਰੇ।"

ਕਿਸਾਨ ਮਹਾਂ ਪੰਚਾਇਤਾਂ

17 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਭੀਖੀ, ਮਾਨਸਾ, ਪੰਜਾਬ

18 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਰੇਲ ਰੋਕੋ, ਦੇਸ਼ ਭਰ ਵਿੱਚ, 12-4

18 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਰਾਇ ਸਿੰਘ ਨਗਰ, ਸ੍ਰੀ ਗੰਗਾਨਗਰ, ਰਾਜਸਥਾਨ

19 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਹਨੂੰਮਾਨਗੜ੍ਹ, ਰਾਜਸਥਾਨ

21 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਬਰਨਾਲੇ ਵਿਚ ਕਿਸਾਨ ਮਜ਼ਦੂਰ ਏਕਤਾ ਮਹਾਂ ਰੈਲੀ

23 ਫ਼ਰਵਰੀ - ਸੀਕਰ, ਰਾਜਸਥਾਨ

"ਕੋਈ ਅਕਲ ਦਾ ਕਰੋ ਇਲਾਜ ਯਾਰੋ" (ਕਿਸਾਨ ਸੰਘਰਸ਼ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ' ਚ) ਲੇਖ ਵਿੱਚੋਂ

ਜਸਪਾਲ ਸਿੰਘ ਸਿੱਧੂ

ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮੂਹਾਂ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ/ਪਛਾਣ ਵਿੱਚ ਹੀ ਮੌਲਦਾ ਅਤੇ ਬਲੰਦੀਆਂ ਸਰ ਕਰਦਾ। ਖੈਰ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਕਾਮਰੇਡ ਨੇ ਗੈਰ-ਕਾਮਰੇਡ ਵੰਨਗੀਆਂ ਦੇ ਕਿਸਾਨੀ ਲੀਡਰਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਸਾਨੂੰ ਸੰਪੂਰਨਤਾ (Perfection) ਲੱਭਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਨਹੀਂ ਕਰਨੀ ਚਾਹੀਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਬੰਦੇ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਅਮਲ ਵਿੱਚੋ ਹੀ ਹੁੰਦਾ ਅਤੇ ਬਹੁਤੀ ਵਾਰੀ ਵਿਕਾਸ ਸਮੇਂ ਦਾ ਹਾਣੀ ਨਹੀਂ ਬਣਦਾ। ਪਰ ਇਸੇ ਗੱਲ ਦੀ ਯਾਦ ਰੱਖਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ ਕਿ ਤਮਾਮ ਕਮੀਆਂ/ਕਮਜ਼ੋਰੀਆਂ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰਾਂ ਦਾ ਇੰਨਾ ਵੱਡਾ ਕਿਸਾਨੀ ਉਭਾਰ ਉਠਾਉਣ ਵਿੱਚ ਵੱਡਾ ਯੋਗਦਾਨ ਹੈ ਜਿਸਨੇ ਹਿੰਦੂ ਰਾਸ਼ਟਰਵਾਦੀ ਤਾਨਾਸ਼ਾਹੀ ਨਿਜ਼ਾਮ ਨੂੰ ਵਖਤ ਵਿੱਚ ਪਾ ਛੱਡਿਆ। ਦੁਨੀਆਂ ਦੀ ਨੀਓ-ਲਿਬਰਲ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਵਿਵਸਥਾ ਜਿਹੜੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹਰ ਪੱਧਰ ਉੱਤੇ ਮਨਫੀ ਕਰਦੀ ਹੈ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਇਹ ਪਹਿਲੀ ਵੱਡੀ ਲੜ੍ਹਾਈ ਲਾਮਬੰਦ ਹੋਈ ਹੈ। ਇਸੇ ਕਰਕੇ, ਇਸ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਸਾਰੀ ਦੁਨੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਹਮਾਇਤ ਹਾਸਲ ਹੋਈ ਹੈ।

ਇਹ ਵੀ ਸਚਾਈ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਢਹਿ ਜਾਂਦਾ ਤਾਂ ਕਿਸਾਨੀ ਹਮੇਸ਼ਾ-ਹਮੇਸ਼ਾ ਲਈ ਬਰਬਾਦ ਹੋ ਜਾਵੇਗੀ। ਮੁੜ੍ਹ ਲੜ੍ਹਾਈ ਇਸ ਪੱਧਰ ਦੀ ਖੜ੍ਹੀ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕੇਗੀ। ਇਮਾਨਦਾਰ ਸਿੱਖ ਬੁਧੀਜੀਵੀਆਂ/ਵਿਚਾਰਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਕਦੇ ਵੀ ਗਰੀਬ ਸਿੱਖ ਕਿਸਾਨੀ ਨੂੰ ਅੱਖ-ਪਰੋਖੇ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦੀ ਜਿਸ ਨੇ ਸਿੱਖੀ ਨੂੰ ਮਜ਼ਬੂਤ ਅਧਾਰ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ। ਛੋਟੀ ਸਿੱਖ ਕਿਸਾਨੀ ਨੂੰ ਬਚਾਉਣਾ ਹੀ ਸਿੱਖ ਫਲਸਫੇ/ਗੁਰੂ ਪਰੰਪਰਾਂ ਦੀ ਵੱਡੀ ਸੇਵਾ ਹੈ। ਪਰ ਅਫਸੋਸ ਹੈ, ਸਿੱਖ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦਾ ਵਾਸਤੇ ਪਾਉਣ ਵਾਲੇ ਸਿੱਖ ਵਿਚਾਰਵਾਨ ਸਮੇਂ ਦੀ ਜ਼ਰੂਰਤ ਅਨੁਸਾਰ ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਨਾਲ ਮੋਢੇ ਨਾਲ ਮੋਢਾ ਜੋੜ੍ਹ ਕੇ ਲੜ੍ਹਨ ਵਾਲੀ ਕੋਈ ਇੱਕ ਵੀ ਸਿੱਖ ਜਥੇਬੰਦੀ ਖੜ੍ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕੇ।

ਐਵੇ ਕਿਸਾਨੀਂ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਲੀਡਰਾਂ ਨੂੰ ਕੋਸ਼ਣ, ਬੁਰਾ-ਭਲਾ ਕਹਿਣ ਅਤੇ ਖਾਮੀਆਂ ਉਘੇੜਣ ਦੇ ਕਸ਼ੀਦੇ ਕੱਢਦੇ ਰਹੇ। ਮਾਨਵੀ ਅਹਿਸਾਸ ਅਤੇ ਜਥੇਬੰਦਕ ਪਹੁੰਚ ਅਤੇ ਟਰੇਨਿੰਗ ਤੋਂ ਕੋਰੇ ਕਈ "ਸਿਆਣੇ" ਸਿੱਖ ਈਰਖਾ-ਵਸ ਲੰਗੜ੍ਹੇ ਘੋੜਿਆਂ ਉੱਤੇ ਕਾਠੀਆਂ ਸਜਾਉਦੇ ਰਹੇ। ਕਈ 'ਨਾ ਖੇਡਾ ਨਾ ਖੇਡਣ ਦੇਣਾ' ਵਾਲੀ ਸ਼ਰੀਕਪੁਣੇ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਰਾਜਸੱਤਾ ਦੇ ਭੁਖਿਆਂ ਨੂੰ 'ਨਾਇਕ' ਹੋਣ ਦੇ ਰੁਤਬੇ ਬਖਸ਼ਦੇ ਰਹੇ। ਅਜਿਹੀ ਖੇਡਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ਨਿਕਲਿਆ ਕਿਉਂਕਿ "ਆਪ ਮਰੇ ਬਗੈਰ ਸੁਰਗ (ਸਵਰਗ)" ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਜਾਇਆ ਜਾਂਦਾ।

ਦਰਅਸਲ ਕਿਸਾਨੀ ਮੋਰਚੇ ਦੇ ਪਿਛਲੇ ਸਤੰਬਰ-ਅਕਤੂਬਰ ਵਿੱਚ ਉਭਰਣ ਸਮੇਂ ਤੋ ਹੀ ਕਈ ਪਾਤਰ 'ਸਿੱਖੀ ਕਾਰਡ' ਵਰਤੇ ਕੇ ਸਿਆਸੀ ਮਿਲਾਈ ਖਾਣ ਲਈ ਸਰਗਰਮ ਹੋ ਗਏ ਸਨ। ਅਜਿਹੇ ਪਾਤਰਾਂ ਦੀ ਬਾਂਹ ਫੜ੍ਹਨ ਲਈ/ਜਾਂ ਸਿੰਗਾਰਨ ਲਈ ਵਿਦੇਸ਼ੀ "ਪੰਨੂ" ਤਿਆਰ-ਬਰ-ਤਿਆਰ ਬੈਠੇ ਸਨ। ਖੁਦ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸਿੱਖ ਫੈਸਲਾ ਕਰਨ ਕਿ ਵਿਦੇਸ਼ੀ "ਪੰਨੂਆਂ" ਵੱਲੋਂ ਐਲਾਨੀ "ਫਰੌਤੀ" ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਮਾਨ-ਸਨਮਾਨ ਵਧਾਉਂਦੀ ਹੈ ਜਾਂ ਫਿਰ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ "ਭਾੜੇ ਦੇ ਸਿਪਾਹੀ" (Mercenaries) ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ "ਫਰੌਤੀ ਸਿਆਸਤ" ਨੂੰ ਕਿਉਂ ਲਗਾਤਾਰ ਕਾਇਮ ਰੱਖਿਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਅਤੇ ਕੌਣ ਇਸ ਦੇ ਪਿੱਛੇ ਹੈ? ਆਪਣੀ ਲੜ੍ਹਾਈ ਧਰਤੀ-ਪੁੱਤਰ ਖੁੱਦ ਹੀ ਲੜ੍ਹਦੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਬਾਹਰਲਿਆਂ ਦੇ ਢਹੇ ਚੜ੍ਹੇ ਪੰਜਾਬ ਨੇ ਲੰਬਾ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਇਆ। ਬਾਹਰਲੀ ਮਾਇਆ ਨੇ ਤਾਂ 'ਤਲੀ ਉੱਤੇ ਸਿੱਰ ਧਰੀ' ਫਿਰਦੇ ਯੋਧਿਆਂ ਦੀ ਧੁਰ-ਆਤਮਾ ਵਿੱਚ ਵੀ ਸੁਰਾਖ ਕਰ ਦਿੱਤੇ ਸਨ। ਲੋਕ ਪੱਖੀ ਸਹੀ ਸਿਆਸਤ ਹਮੇਸ਼ਾਂ ਆਪਣੀ ਜ਼ਮੀਨ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਫੁੱਟਦੀ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਹਾਲਾਤਾਂ ਨੂੰ ਹੰਢਾਉਦੇ ਲੋਕ-ਖੁਦ ਆਪ ਲੜਿਆ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਸਿੱਖ ਗੁਰੂਆਂ ਨੇ ਇਸੇ ਧਰਤੀ ਦੇ ਲਤਾੜ੍ਹੇ ਗਏ ਅਤੇ ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਗੀਦੀ ਹੋਏ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਜ਼ਾਬਰਾ ਵਿਰੁੱਧ ਲੜਾਇਆ ਸੀ।

ਪ੍ਰਚਾਰਹਿਤ, ਕਿਸਾਨ ਲੀਡਰ ਭਾਵੇਂ ਮੌਜੂਦਾ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਗੈਰਸਿਆਸੀ ਕਹੀ ਜਾਣ ਪਰ ਹਰ ਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਹਮੇਸ਼ਾ ਸਿੱਧੇ/ ਅਸਿੱਧੇ ਤੌਰ ਉੱਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਲੜ੍ਹਾਈਆਂ ਹੀ ਹੋ ਨਿਬੜ੍ਹੇ ਹਨ। ਕਿਸਾਨੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਗੈਰ-ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਤੇ ਸ਼ਾਂਤਮਈ ਰੱਖਣਾ/ ਪੇਸ਼ ਕਰਨਾ ਮੌਕੇ ਦੀ ਵੱਡੀ ਜ਼ਰੂਰਤ ਹੈ। ਲੋਕ ਅੰਦੋਲਨ ਬਣਿਆ ਅੱਜ ਦਾ ਕਿਸਾਨੀ ਘੋਲ ਪਹਿਲਿਆਂ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲੇ ਵਿੱਚ ਵੱਡੀਆਂ ਸਿਆਸੀ ਤਬਦੀਲੀਆ ਦਾ ਸੂਚਕ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ, ਸਿੱਖ ਵਿਚਾਰਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਸੰਘਰਸ਼ ਨੂੰ ਮਜ਼ਬੂਤ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਰੋਲ ਨਿਭਾਉਣ ਅਤੇ ਲੋਕ-ਪੱਖੀ ਜ਼ਮਹੂਰੀਅਤ ਨੂੰ ਤਕੜ੍ਹਾ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਹਿੱਸਾ ਪਾਉਣ।

ਜਵਾਬ

ਸੁਖਦੀਪ ਸਿੰਘ ਖਹਿਰਾ

ਕੰਮ ਤੋਂ ਘਰ ਆਉਂਦਿਆਂ ਹੀ ਵਹੁਟੀ ਨੂੰ ਬੈਗ ਫੜਾਉਣ ਲੱਗਾ ਤਾਂ ਕਹਿੰਦੀ ਕੇ ਬਾਪੂ ਜੀ ਸਵੇਰ ਦਾ ਤੁਹਾਡੇ ਬਾਰੇ ਪੁੱਛ ਰਹੇ ਸੀ, ਸ਼ਾਇਦ ਕੋਈ ਜ਼ਰੂਰੀ ਗੱਲ ਕਰਨੀ ਆ। ਬਾਪੂ ਜੀ ਕੋਲ ਗਿਆ ਤਾਂ ਕਹਿੰਦੇ ਕੇ ਪੁੱਤ ਪਿੰਡੋਂ ਅੱਜ ਦਿੱਲੀਧਰਨੇ ਲਈ ਟਰਾਲੀ ਜਾ ਰਹੀ ਆ, ਤੂੰ ਵੀ ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਈ ਚਲਾ ਜਾ। ਮੈਂ ਇੱਕਦਮ ਹੈਰਾਨ ਹੁੰਦੇ ਨੇ ਪੁੱਛਿਆ ਕੇ ਬਾਪੂ ਜੀ ਅੱਜ ਅਚਾਨਕ ਏ ਖਿਆਲ ਕਿਵੇਂ? ਕਹਿੰਦੇਕਿ ਤੂੰ ਮੈਨੂੰ ਕਿੰਨੀ ਵਾਰ ਪੁੱਛਿਆ ਕਿ ਜਦ 84 ਵੇਲੇ ਸਾਰੇ ਜਣੇ ਹਰਿਮੰਦਰ ਸਾਹਿਬ ਜਾ ਰਹੇ ਸੀ ਤੇ ਤੁਸੀ ਕਿਉਂ ਨਹੀਂ ਗਏ? ਮੇਰੇ ਕੋਲ ਤੇਰੀ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਕੋਈਜਵਾਬ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ ਕਿਉਂਕਿ ਮੈਂ ਪਰਿਵਾਰ ਬਾਰੇ ਸੋਚਦਾ ਰਿਹਾ, ਕੌਮ ਬਾਰੇ ਨਹੀਂ।

ਮੈਂ ਨਹੀਂ ਚੁਹੰਦਾ ਕੇ ਕੱਲ ਨੂੰ ਤੇਰਾ ਪੁੱਤ ਪੁੱਛੇ ਕੇ ਡੈਡੀ ਜੀ ਜਦ 2020 ਵਿੱਚ ਸਾਰੇਦਿੱਲੀ ਧਰਨੇ ਚ ਹਿੱਸਾ ਪਾਉਣ ਗਏ ਸੀ ਤਾਂ ਤੁਸੀ ਉਦੋਂ ਕਿਥੇ ਸੀ ਤੇ ਤੇਰੇ ਕੋਲ ਵੀ ਮੇਰੇ ਵਾਂਗੂ ਕੋਈ ਜਵਾਬ ਨਾ ਹੋਵੇ। ਬਾਪੂ ਜੀ ਦੀ ਗੱਲ ਸੁਣਦਿਆਂ ਈ ਮੈਂ ਨਾਲਦੀ ਨੂੰਇਕ ਹਫਤੇ ਦੇ ਕੱਪੜੇ ਪੈਕ ਕਰਨ ਨੂੰ ਕਹਿ ਦਿੱਤਾ।ਤੁਰਨ ਲੱਗਿਆਂ ਮੈਨੂੰ 2000 ਦਾ ਨੋਟ ਫੜਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਬਾਪੂ ਜੀ ਕਹਿੰਦੇ ਕੇ ਮੇਰੇ ਵੱਲੋਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਲੰਗਰ ਵਿੱਚ ਬਣਦਾਸਰਦਾ ਹਿੱਸਾ ਪਾ ਦੇਵੀਂ। ਨੋਟ ਫੜ੍ਹਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਮੈਂ ਸੋਚ ਰਿਹਾ ਸੀ ਕਿ ਧੰਨ ਐ ਸਾਡੀ ਕੌਮ ਤੇ ਧੰਨ ਨੇ ਸਾਡੀ ਕੌਮ ਦੇ ਸਾਰੇ ਪਿਤਾ ਜੋ ਨਤੀਜਿਆਂ ਦੀ ਪਰਵਾਹ ਕੀਤੇਬਿਨਾਂ ਆਪ ਦੀ ਔਲਾਦ ਨੂੰ ਕੌਮ ਦੇ ਭਲੇ ਲਈ ਤੋਰਦਿਆਂ ਦੇਰ ਨਹੀਂ ਲਾਉਂਦੇ।

ਸੰਯੁਕਤ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਵੱਲੋਂ ਕਾਨੂੰਨੀ ਸਹਾਇਤਾ

ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਕਾਨੂੰਨੀ ਟੀਮ ਗ੍ਰਿਫ਼ਤਾਰ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਮਿਲੀ, ਸਾਰੇ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਵਿਚ ਹਨ। 10 ਜਣਿਆਂ ਨੂੰ ਜ਼ਮਾਨਤ ਮਿਲ ਗਈ ਹੈ। ਬਾਕੀ ਦੇ 112 ਕਿਸਾਨ ਵੱਖ ਵੱਖ ਜ਼ੇਲ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਕੈਦ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਮਾਲੀ ਮਦਦ ਜੇਲ੍ਹ ਵਿਚ ਜਮਾਂ ਕਰ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਸਾਰਿਆਂ ਦੀਆਂ ਧਾਰਾਵਾਂ ਮੁਤਾਬਿਕ ਜ਼ਮਾਨਤ ਅਰਜ਼ੀ ਦਿੱਤੀ ਜਾਵੇਗੀ। 16 ਕਿਸਾਨ ਹਲੇ ਵੀ ਲਾਪਤਾ ਹਨ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਭਾਲ ਜਾਰੀ ਹੈ। ਵੱਖਰੇ ਵੱਖਰੇ ਕੇਸਾਂ ਵਿਚ 150 ਦੇ ਕਰੀਬ ਵਕੀਲ ਕਿਸਾਨਾਂ ਦੇ ਵਕਾਲਤ ਕਰਨਗੇ। ਦਿੱਲੀ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਬੰਧਕ ਕਮੇਟੀ ਦੇ 4 ਵਕੀਲ ਵੀ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਕਾਨੂੰਨੀ ਟੀਮ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਹਨ।

ਪੁਲਿਸ ਨੇ ਕਈ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਨੋਟਿਸ ਭੇਜੇ ਹਨ। ਜੋ ਲੋਕ ਸਿੱਧੇ ਪੁਲਿਸ ਕੋਲ ਚਲੇ ਗਏ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਜੇਲ੍ਹ ਭੇਜ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ। ਇਹ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਡਰਾਉਣ ਦੀਆਂ ਚਾਲਾਂ ਹਨ। ਮੋਰਚੇ ਵੱਲੋਂ ਅਪੀਲ ਹੈ ਕਿ ਅਜਿਹੇ ਨੋਟਿਸ ਦੇ ਸੰਬੰਧ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਜਥੇਬੰਦੀ ਰਾਹੀਂ ਜਾਂ ਸਿੱਧਾ ਸੰਯੁਕਤ ਕਿਸਾਨ ਮੋਰਚੇ ਦੀ ਕਾਨੂੰਨੀ ਟੀਮ ਨੂੰ ਸੰਪਰਕ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ ਅਤੇ ਵਕੀਲ ਦੀ ਸਲਾਹ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਕੋਈ ਕਦਮ ਨਾ ਚੁੱਕਿਆ ਜਾਵੇ।

ਕਾਨੂੰਨੀ ਸਹਾਇਤਾ ਟੀਮ ਦੇ ਨੰਬਰ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਹਨ:

ਵੀਰ ਸਿੰਘ ਸੰਧੂ - 8447466012
ਜਸਦੀਪ ਸਿੰਘ ਢਿੱਲੋਂ - 9910499840
ਕਪਿਲ ਮਾਦਾਨ - 9971305252

ਯੁੱਧਿਆਜੀਵੀ ਤੋਂ ਅੰਦੋਲਨਜੀਵੀ ਤੱਕ: ਪਾਣਿਨੀ ਅਤੇ ਮੋਦੀ

ਜਤਿੰਦਰ ਮੌਹਰ

ਛੇਵੀਂ ਸਦੀ ਈਸਾ ਪੂਰਵ ਵਿੱਚ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਦੇ ਵਿਦਵਾਨ ਪਾਣਿਨੀ ਨੇ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਕੁਝ ਕਬੀਲਿਆਂ ਦੀ ਸਾਂਝੀ ਜਥੇਬੰਦੀ ਨੂੰ 'ਯੁੱਧਿਆਜੀਵੀ ਸੰਘ' ਕਿਹਾ ਸੀ। ਪੰਜਾਬ (ਸਿੰਧ ਤੋਂ ਜਮਨਾ ਤੱਕ ਦੇ ਖਿੱਤੇ) ਵਿੱਚ ਖੁਦਮੁਖਤਿਆਰ ਕਬੀਲਿਆਂ ਦੀ ਲੰਬੀ ਰਵਾਇਤ ਰਹੀ ਹੈ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਜਮਹੂਰੀਅਤ ਅਤੇ ਬਰਾਬਰੀ ਉੱਤੇ ਟਿਕਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਵਪਾਰੀਆਂ, ਕਾਰੀਗਰਾਂ ਅਤੇ ਹੋਰ ਕਿੱਤਿਆਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਆਜ਼ਾਦ ਸੰਘ ਹੁੰਦੇ ਸਨ। ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਖੁਦਮੁਖਤਿਆਰ ਕਬੀਲੇ ਅਤੇ ਸੰਘ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਧਾੜਵੀਆਂ ਅਤੇ ਕੇਂਦਰੀ ਸਾਮਰਾਜਾਂ ਦੀ ਲੁੱਟ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਜੂਝਦੇ ਰਹੇ। ਪ੍ਰਧਾਨ ਮੰਤਰੀ ਮੋਦੀ ਨੇ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨੂੰ ਜਥੇਬੰਦ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ 'ਅੰਦੋਲਨਜੀਵੀ' ਕਿਹਾ ਹੈ। ਮੌਜੂਦਾ 'ਅੰਦੋਲਨਜੀਵੀ' ਵੀ ਦੇਸੀ-ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਲੁਟੇਰਿਆਂ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਡਟੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਆਪਣਾ ਕਿਰਦਾਰ ਕਾਇਮ ਰੱਖਿਆ ਹੈ।

ਆਰੀ ਆਰੀ ਆਰੀ
ਵਿੱਚ ਜਗਰਾਵਾਂ ਦੇ
ਹੋਈ ਹੱਕ ਦੀ ਰੌਸ਼ਨੀ ਭਾਰੀ
ਅੱਥਰੇ ਸਾਨ੍ਹਾਂ ਨੇ
ਧਾੜ ਖੇਤਾਂ 'ਤੇ ਮਾਰੀ
ਚੋਬਰਾਂ ਨੇ ਲੱਕ ਬੰਨ੍ਹ ਲੇ
ਕਰਦੇ ਲੋਕ ਤਿਆਰੀ
ਰੋਕਿਆਂ ਨਾ ਹੁਣ ਰੁਕਦੇ
ਜਦੋਂ ਜਿੰਦ ਨੂੰ ਮਾਮਲੇ ਭਾਰੀ
ਧਨੇਰ ਤੋਂ ਮਨਜੀਤ ਚੜ੍ਹਿਆ
ਜੀਹਤੇ ਚੱਲਗੇ ਮੁਕੱਦਮੇ ਚਾਲੀ
ਦੇਖ ਆਉਂਦਾ ਡੱਲੇਆਲੀਆ
ਵਾਂਗ ਨਦੀਆਂ ਦੇ ਵਗਦੀ ਦਾੜ੍ਹੀ
ਹੱਥ ਹਿੱਲੇ ਰਾਜੇਆਲ ਦਾ
ਸੱਤਾ ਫਿਰਦੀ ਦਲੀਲੋਂ ਹਾਰੀ
ਰੁਲਦੂ ਮਾਨਸੇ ਦਾ
ਡਾਂਗ ਰੱਖਦਾ ਕੋਕਿਆਂ ਵਾਲੀ
ਢੁੱਡੀਕਿਆਂ ਦੇ ਨਿਰਭੈ ਨੇ
ਲਾਈ ਉਮਰ ਘੋਲਾਂ ਵਿੱਚ ਸਾਰੀ
ਬਾਈ ਉਗਰਾਹਾਂ ਨੇ
ਕਥਾ ਲੁੱਟ ਦੀ ਸੁਣਾ ਤੀ ਸਾਰੀ
ਲੋਟੂਆਂ ਦਾ ਰਾਹ ਮੱਲਿਆ
ਜਦ ਪਿੜ ਵਿੱਚ ਆਗੀ ਨਾਰੀ
ਦੁਨੀਆਂ 'ਤੇ ਗੱਲ ਚੱਲਦੀ
'ਕੱਠ ਜੁੜਿਆ ਜਗਤ ਤੋਂ ਭਾਰੀ
ਕਾਮਿਆਂ ਦੀ ਸੱਥ ਜੁੜਗੀ
ਬੜਕ ਪੰਜਾਬ ਨੇ ਮਾਰੀ
ਜਨਤਾ ਮੋੜ ਦਊ
ਤੇਰੇ ਵਾਰ ਨੀ ਹਕੂਮਤੇ ਭਾਰੀ
ਜਨਤਾ ਮੋੜ ਦਊ ...

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ़ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूँ - ‘यह तीसरा आदमी कौन है ?’
मेरे देश की संसद मौन है।

धूमिल